रेलवे थर्ड क्लास

लेखक—

विद्यावाचस्पति गणेशदत्त शर्मा गौड़ 'इन्द्र'

"जब तक मुसाफिर नहीं सुधरेंगे, तब तक रेलवे-वालों के सुधार की बहुत कम सम्भावना है। ××× इसके लिये ऐसे प्रचारकों की आवश्यकता है जो तीसरे दर्जे में मुसाफिरी करके यात्रियों को समझा देवें। यात्रियों को सचेत करने के लिये पत्रिकाएँ भी बँटवानी चाहिये। प्रचारकों का ढीठ और निस्संकोच होना जरूरी है। इन्हें खुद झाड़ू लगाने में भी नहीं शर्माना चाहिये।"

—महात्मा गाँधी

प्रकाशक—

गुप्त ब्रादर्स, बनारस सिटी।

प्रथमबार] १९३० ई० [मूल्य ॥)
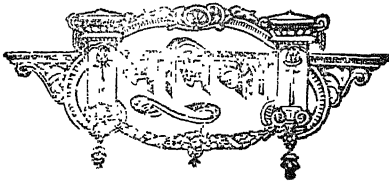
यह पुस्तक हिन्दीसंसार के चिरपरिचित सुप्रसिद्ध पं० गणेशदत्तजी शर्मा गौड (विद्यावाचस्पति) आगर मालवा-निवासी द्वारा लिखी गई है। आपकी लेखनी द्वारा दर्जनों पुस्तकों की रचना हो चुकी है, अतएव आपके परिचयार्थ अधिक लिखना मानो अपना व पाठकों का समय नष्ट करना है। यह पुस्तक यद्यपि छोटी है; तथापि अपना उद्देश सफल करने के लिये पर्याप्त है।

रेलवे का विषय जटिल और गहन है। इसपर पोथे-के-पोथे लिखे जा सकते हैं। पंडितजी ने यह काम साररूप एवं सरल भाषा में किया है। इससे तीसरे दर्जे के डब्बेवाले यात्री ही लाभ उठा सकेंगे, सो नहीं--ऊँचे दर्जे के रेलयात्री भी रेलयात्रा अथवा रेल-विषयक बहुत सी अन्य बातों की जानकारी प्राप्त कर अपनी अनभिज्ञता द्वारा होती हुई अनेक असुविधाओं तथा कष्टों में कमी कर सकेंगे।

भारतवर्ष में रेल का इतना बड़ा जाल-सा फैला होनेपर तथा प्रतिवर्ष हिन्दी-भाषाभाषी करोड़ों यात्रियों को रेल द्वारा यात्रा करते रहने पर भी रेल जैसी रफ़ाए-आम (Public utility) की वस्तु पर हिन्दी में तद्वि-

षयक पुस्तक का न होना एक बड़े ही दुःख तथा आश्चर्य की बात है। ऐसी पुस्तक का होना अत्यावश्यक था, जिसे पंडितजी ने लिखकर हिन्दी साहित्य में एक खटकनेवाले अङ्ग की कमी को पूरा किया है। वास्तव में, इस पुस्तक के बहुत पहिले ही रेल-ज्ञान-धुरंधरों द्वारा ऐसी कई पुस्तकें लिखी जानी चाहिये थीं।

तीसरे दर्जे के डब्बों में, रेल यात्रियों को जो दुसह दुःख सहने पड़ते हैं वे किसी से छिपे नहीं हैं। यदि यह कहा जाय कि "उनके प्रति, पशुओं से भी बुरा बर्त्ताव किया जाता है" तो इसमें किञ्चित् भी अतिशयोक्ति नहीं है। पशुओं के डब्बों में निर्द्धारित की हुई संख्या से अधिक पशु नहीं ठेले जाते; किन्तु मनुष्यों के डब्बों में तो मानव कहलानेवाले प्राणी इस तरह बेरहमी के साथ ठसाठस ठूँस दिये जाते हैं, मानो मनुष्य के आकार में विविध प्रकार की व्यापारिक सामग्री के थैले भरे गये हों। इतना ही नहीं, बल्कि उचित अथवा अनुचित रीति से जब किसी रेलवे-कर्मचारी को यात्रियों से पैसा छीनना होता है तो वह भी इन तीसरे दर्जे के यात्रियों को ही सताता है। घर से निकलने के बाद, जब तक वे अपने नियुक्त स्थान पर पहुँच नहीं जाते एक-न-एक अड़ंगा उनकी जान पर लगा ही रहता है। यह सब क्यों? केवल इस ही लिए कि उन्हें अपने स्वत्व और अधिकारों का ज्ञान नहीं है—और रेल-कानून निपुणों अथवा

अन्य योग्य मनुष्यों की उनके प्रति इन रोज़मर्रह होने वाले जुल्मों के बाबत कोई सच्ची सहानुभूति, न तो कभी रही और न इस समय ही है, नहीं तो ऐसा कदापि नहीं हो सकता था। अस्तु, अब इस पुस्तक से वे अपने अधिकारों का उचित ज्ञान प्राप्त कर रेल-यात्रा सम्बन्धी अड़चनों तथा अमानुषिक अत्याचारों का सफाया करने में स्वयं प्रयत्नशील हो उन्हें समूल नष्ट करने में सफल हो सकेंगे।

इस पुस्तक में एक जगह लगेज (सामान) की बड़ी पेटियों को रेलगाड़ी के गार्ड बाबू के हवाले करने की सलाह दी गई है। परन्तु ऐसा करने के पूर्व यात्रियों को चाहिये कि, यदि ऐसी पेटियों में कोई बहुमूल्य चीजें हों तो वे उन्हें उनमें न रहने देवें— निकाल कर अपने पास रख लेवें। क्योंकि गार्डों के सपुर्द की हुई पेटियों में से ऐसी चीजें पड़तालियाँ लगाकर कई बार निकाली जा चुकी हैं। जिसकी बाबत रेल कम्पनियों से आज तक किसीने भी शायद ही दाद पाई हो; और वर्त्तमान रेलवे-कानून में जब तक उचित सुधार न हो तब तक न कोई भविष्य में ही पा सकेगा।

रेल-कानून की धारा संख्या ७७ के अनुसार बहुमूल्य चीजों की, जिनकी कीमत एक सौ रुपये से अधिक हो—रेल-कम्पनी द्वारा बीमा कराना आवश्यक है। ऐसी बहुमूल्य चीजों में से कुछ के नाम ये हैं—

सोना, चाँदी तथा उनसे बनी हुई चीजें, जवाहिरात, घड़ियाँ, रेशम, मखमल, ज़री, गोटा, तथा इनसे बनी हुई वस्तुएँ, दुशाले, हाथी दाँत तथा उसका बना हुआ सामान, मूँगा, चन्दन, चन्दन का तेल, कस्तूरी, गाने बजाने की पेटियाँ, तसबीरें, सरकारी स्टाम्प तथा अन्य कागज़-पत्र, हुँडियाँ, बैङ्कनोट, नक्शे, काँच, चीनी मिट्टी तथा संगमरमर की बनी हुई चीजें इत्यादि। रेल-कम्पनियों के बीमे की दर अत्यधिक होने से, ऐसे माल का बीमा प्रायः लोग नहीं कराते और इस कमी के कारण अपना माल खोकर आखिर-कार रो-धोकर रह जाते है। रेल-कम्पनियों के बीमे का निरख काँच, चीनी मिट्टी तथा संगमरमर के सामान पर प्रति सौ मील चार आना सैकड़ा के हिसाब से और उसी प्रकार सोना चाँदी आदि चीजों की दो आना सैकड़ा है।

इस छोटी सी किन्तु उपयोगी पुस्तक में लिखी हुई बातों पर यदि पाठकों ने अमल करना प्रारम्भ कर दिया तो रेल-यात्रा में होने वाले वर्त्तमान कष्टों का अन्त होने में अधिक दिन नहीं लगेंगे। कर्त्तव्य में न लगकर भाग्य-भरोसे दूसरों का, सहायतार्थ मुँह ताकनेवालों ने न तो पहले कभी सुख पाया है और न आगे कभी पा सकेंगे।

कलकत्ता } पी० एल० बाकलीवाल
ता० २७—११—३० } सम्पादक—"रेलवे-समाचार"
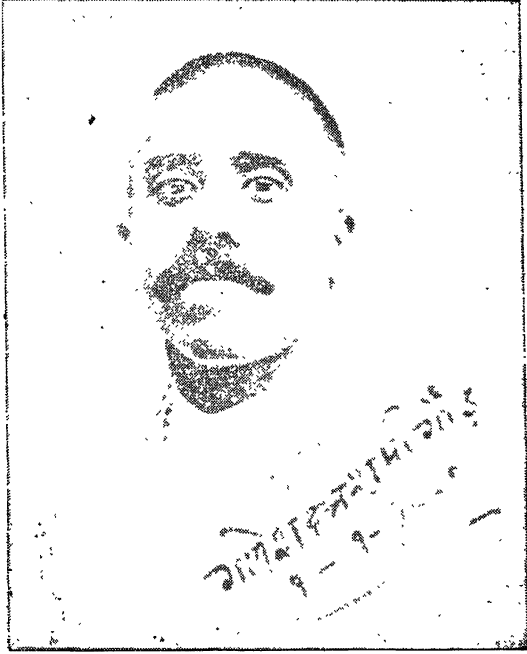
ग्रन्थकार--

विद्यावाचस्पति पं० गणेशदत्त शर्मा गौड़ 'इन्द्र'

सम्पादक 'गोरक्षण'

* श्रीः *

रेलवे थर्ड क्लास

रेलवे का इतिहास

सबसे पहले इङ्गलैंड में, सन् १८२५ ई० में भाफ द्वारा चलनेवाले एञ्जिन से लोहे की पटरियों पर गाड़ियाँ चलाई गईं। परन्तु उनमें सिर्फ माल असबाब ही लाया और ले जाया जाता था। सन् १८३० ई० से मुसाफिरों का आना-जाना रेल से शुरू हुआ।

उन दिनों भारत में "ईस्ट इण्डिया कम्पनी" का राज्य था। इसलिये उसने भारत में भी रेल चलाने का विचार किया। यह सन् १८४० ई० की बात है। सन् १८४४ में इङ्गलैंड के कुछ व्यापारियों ने ईस्ट इण्डिया कम्पनी के सामने यह प्रस्ताव रखा कि "यदि सरकार मूलधन पर ३ फी सैकड़ा सूद देवे तो हम भारत में रेलवे चला सकते हैं।" इसपर कम्पनी ने अपने डायरेक्टरों को लिखा और वहाँ से यहाँ हिन्दुस्तान में एक इस विषय का अच्छा ज्ञाता व्यक्ति आया। उसने बहुत जाँच-पड़ताल के बाद यह राय

दी कि "रेलवे के लिये सङ्गठित होनेवाली कम्पनियों को मूलधन पर निश्चित लाभ और जमीन मुफ्त दी जानी चाहिये।"

यह विषय वायसराय की कौंसिल में विचार करने के लिये पेश किया गया। भारत में रेल का प्रचार करने के सम्बन्ध में, कौन्सिल में बहुत मतभेद था। कुछ लोगों का यह खयाल था कि हिन्दुस्थान में मुसाफिरों की संख्या इतनी नहीं मिल सकेगी कि जिससे रेलवे कम्पनी को अच्छा मुनाफा मिल सके। आखिरकार कम्पनी के डायरेक्टरों का निश्चय पाकर वायसराय की कौंसिल ने रेलवे के लिये ज़मीन तो मुफ्त देना मंजूर किया, परन्तु निश्चित लाभ देना उचित न समझा। लार्ड हार्डिंज की यह राय थी कि—"सैनिक दृष्टि से भी हिन्दुस्तान में रेल चलनी चाहिये और सिर्फ दिल्ली से कलकत्ते तक की रेल के लिये पाँच लाख रुपये और जमीन मुफ्त देना चाहिये।" इस प्रकार की लिखा पढ़ी में लगभग दो-तीन वर्ष लग गये।

लार्ड डलहौजी भारत में रेल मार्ग खोलने के बड़े पक्षपाती थे। उन्होंने इस विषय में बहुत ही प्रयत्न किया। ता० १७ अगस्त सन् १८४९ को "ईस्ट इण्डियन रेलवे" और "ग्रेट इण्डियन पेनिन्सुला रेलवे" नामक दो रेलवे कम्पनियों का संगठन हुआ। सरकार और कम्पनियों के बीच में नीचे लिखी शर्तें तय हुईं—

१—सरकार ज़मीन मुफ्त दे।

२—मूलधन पर कम्पनी को अगर पाँच रुपया फी सैकड़ा के हिसाब से कम मुनाफा मिले तो सरकार उसे पूरा करे।

३—पाँच रुपये सैकड़े से जो मुनाफा ऊपर होगा, उसे कम्पनियाँ स्वयं लेंगी, उसमें सरकार का कुछ भी अधिकार न होगा।

४—लाभ का हिसाब हर छठे महीने होगा।

५—कम्पनियों को लन्दन (इंग्लैण्ड) में लाभ का धन फी रुपया २२ पेन्स के हिसाब से मिलेगा।

६—९९ वर्ष बाद कुल अचल वस्तुएँ सरकार की हो जायेंगी; उनका कुछ भी दाम नहीं देना पड़ेगा।

७—चल चीजें जैसे एंजिन, डिब्बे इत्यादि के लिये उचित दाम देने होंगे।

८—९९ वर्ष के पहले भी सरकार यदि चाहे तो रेलों को ले सकेगी। परन्तु कंपनी के हिस्सों के दाम बाज़ार के भाव से देने पड़ेंगे।

९—२५ वर्ष से पहले सरकार रेलें न ले सकेगी।

१०—कंपनियाँ यदि चाहें तो किसी भी वक्त सरकार से अपना मूलधन लेकर सरकार को खरीदने पर मजबूर कर सकेंगी। इत्यादि—

ये शर्तें रेलवे कम्पनियों के लिये अत्यन्त सुविधाजनक थीं। भारत में अंग्रेज व्यापारियों ने आकर

रेलें बनवाईं--इसका यही कारण था कि भारत में लोग उस समय, इस काम में अपनी पूँजी लगाने को तय्यार नहीं थे। अंग्रेज व्यापारी भी हिचकिचाते थे। अतएव सरकार ने उन्हें घाटे से बचाने का वचन दिया। सरकार ने उनके साथ यह ठेका किया कि ६६ वर्ष तक कंपनियों को जो आमदनी रेलों से हो, वह सरकारी बैंक में जमा हो, और कंपनियाँ जो खर्च करें, वह सरकार की सलाह से करें। इसके बदले में सरकार ने यह वादा किया कि किसी भी वर्ष में कंपनियों की पूँजी पर एक निश्चित रकम से कम मुनाफा (सूद) न मिलने पावेगा। यदि रेल की आमदनी से इतना धन नहीं मिलो कि वह रकम पूरी हो सके तो सरकार अपने पास से रुपया देकर उसे पूरी कर देगी और जब कभी उस रकम से ज्यादः आमदनी रेलों को होगी तो, उस रकम को देने के बाद जो बचेगा उसका आधा कंपनियों के हिस्सेदारों को मुनाफे की शक्ल में दिया जायगा और आधा, सरकार अपने दिये हुए रुपयों को मय सूद के पूरा करने के लिये ले लेगी। इस प्रकार जब सरकार का दिया हुआ सब रुपया चुक जायगा, तब रेलों का सारा मुनाफा हिस्सेदारों ही को मिला करेगा। इसके साथ यह शर्त्त भी थी कि यदि कभी आमदनी से खर्च ज्यादः हो जाय तो सरकार उसके लिये जिम्मेदार न होगी। कंपनियों को यह अधिकार भी दिया गया था कि रेलवे

को, छः महीने चलने के बाद, छः महीने की नोटिस देकर वह सरकार के मत्थे मढ़ दे। सरकार को यह अधिकार दिया गया कि ३० वर्ष बाद रेल की कंपनियों को वह उस भाव पर मोल ले सकती है, जो पिछले तीन वर्षों में कंपनी के हिस्सों (शेयर) के भाव का औसत निकालने पर आवे। सरकार ने यह भी एक शर्त्त करा ली थी, कि किराया कायम करने तथा देख रेख का पूरा-पूरा अधिकार उसे होगा, तथा रेलों को डाक बिना किराये और फौज तथा रसद कम किराया लेकर ढोना पड़ेगा।

ऊपर लिखी शर्तें कम्पनियों के लिये बहुत ही फायदेमन्द साबित हुईं। धड़ाधड़ कम्पनियाँ कायम होकर रेलें चलने लगीं। इस प्रकार कुछ दिन चलने के बाद सरकार की आँखें खुलीं। उसे मालूम हुआ कि विलायती इञ्जीनियरों को भारत की दशा का ठीक-ठीक ज्ञान न होने के कारण आँखें मूँद कर खर्च किया गया है। कम्पनियों को घाटे का भय तो था ही नहीं, इसलिये वे भी अन्धाधुन्ध खर्च करने लगीं। यहाँ तक कि मुनाफा तो दरकिनार रहा, सरकार को, सन् १८६९ में रेलों के हिसाब में लगभग ६६ लाख ५० हजार का नुकसान अपने खजाने से देना पड़ा। सरकार की आँखें खुल गईं; क्योंकि सरकारी खजाना सन् १८५७ के विप्लव (गदर) में तथा सन् १८६५ के अकाल में बहुत कुछ खाली हो चुका था। यह हालत

देख कर सन् १८६९ में गवर्नर जनरल सर जान लारेन्स ने इस इन्तजाम के विरुद्ध भारत-मंत्री से बड़ी सरगर्मी के साथ लिखा पढ़ी की। सर जान लारेन्स ने साफ़ शब्दों में लिखा कि--"सरकार ने रेलवे कम्पनियों से ऐसी बुरी शर्तों पर साझा किया है कि उनसे सिवाय नुकसान के फायदा होने की कोई उम्मीद ही नहीं की जा सकती; क्योंकि कम्पनियाँ मनमानी लाइनें बढ़ाती जाती हैं और अनुभवहीन काम करनेवालों के ज़रिये एक की जगह दस खर्च करती हैं। नतीज़ा यह हो रहा है कि घाटे की रकम सरकार को बिना 'हाँ, ना' किये देनी ही पड़ती है।"

सर जान लारेन्स की इस लिखापढ़ी का नतीजा यह हुआ कि भारत-मंत्री ने बहुत कुछ आगा-पीछा विचार कर यह आज्ञा दी कि,--"आयन्दा सरकार अपने प्रबन्ध और रुपये से रेल की लाइनें बनवावे।" दस वर्ष तक इसी आज्ञा के अनुसार काम हुआ और सरकार ने हर साल २० लाख रुपया रेलों पर खर्च किया। सन् १८७५ ई० में ४० लाख रुपया हर साल रेलों पर खर्च करने की मंजूरी दी गई। किन्तु सन् १८७९ तक पहुँचते-पहुँचते सरकार के खज़ाने में रुपयों की कमी आ गई। इसलिये फिर सरकार को कम्पनियों के साथ साझा करना पड़ा; परन्तु इस बार पहले की शर्तों में कुछ हेरफेर करना पड़ा।

पहले कम्पनियाँ रेलों की मालिक थीं और अपना रुपया लगाती थीं, सरकार केवल घाटा पूरा करती थी; किन्तु अब यह किया गया कि सरकार कुछ रुपया तो स्वयं कर्ज लेकर कम्पनियों को देती और जिसका उनसे सूद लेती थी और बाकी रुपया जो कम्पनियों का लगा था, उनके लिये पहले की शर्तें लागू होती थीं। इससे अब सरकार को कुछ कम घाटा होने लगा। परन्तु सरकार का ध्यान बराबर इसके सुधार की ओर लगा ही रहा। सन् १८६३ में एक नया उपाय किया गया। इसके अनुसार ब्राञ्च लाइनें सरकार की सलाह से कम्पनियों द्वारा बनवाई जाती थीं और खर्चा देने के बाद जो मुनाफा उन ब्राञ्च लाइनों के सम्बन्ध से मेन लाइनों को होता था, उसका दसवाँ हिस्सा मेन लाइनों को देना पड़ता था, जिससे सरकार पर पहिले की अपेक्षा कम खर्च पड़ता था। इसके अतिरिक्त सरकार उन लाइनों के लिये जमीन मुफ्त देती थी और मेन लाइनों से ही गाड़ियाँ आदि दिलवाती थी। किन्तु यह शर्त कम्पनियों को पसन्द नहीं आई, इसलिये सरकार को हारकर यह करना पड़ा कि ब्राञ्च लाइनों के बनवाने में मेन लाइन को जो देना पड़े वह सब सरकार देगी; किन्तु उनके सम्बन्ध में कंपनियाँ अपने हिस्सेदारों को साढ़े तीन फी सैकड़ा से अधिक मुनाफा न दे सकेंगी।

अन्त में सरकार के भाग्य का उदय हुआ और सन् १८६६ के बाद उसे रेलों से फायदा होने लगा। सन् १९०० में लार्ड कर्ज़न ने निश्चय किया कि प्रति वर्ष सरकार कुछ रुपया रेल के लिये अलग कर दिया करेगी। यही हुआ और उस रकम में से कुछ रुपया तो कम्पनियों को दिया जाने लगा और कुछ से पुरानी शर्तों के अनुसार जारी की हुई कम्पनियों को सरकार ने खरीदना शुरू कर दिया। उस वक्त तक आठ रेलवे कंपनियाँ थीं। ये कंपनियाँ किस सन् में स्थापित हुईं और सरकार ने उन्हें किस किस सन् में खरीद लिया यह बात नीचे का नक़शा देखने से मालूम की जा सकती है।

नाम कम्पनी	स्थापित होने का सन्	सरकार द्वारा खरीदे जाने का सन्
१–ईस्ट इण्डियन रेलवे	१८५४	१८७६
२–ईस्टर्न बंगाल रेलवे	१८५८	१८८४
३–सिंध पंजाब दिल्ली रेलवे	१८५८	१८८६
४–अवध रुहेलखण्ड रेलवे	१८६७	१८८९
५–साउथ इण्डियन रेलवे	१८७४	१८९१
६–ग्रेट इण्डियन पेनिन्सुला	१८४३	१९००
७–बम्बे बड़ौदा सेंट्रल इंडिया	१८५५	१९०५
८–मद्रास रेलवे	१८५२	१९०८

सन् १८६२ में इण्डियन ब्रञ्च रेलवे कंपनी स्थापित हुई। उसे जमीन मुफ्त दी गई और गारण्टी नहीं

दी गई। परन्तु बीस वर्ष तक एक हजार रुपया फी मील प्रति वर्ष दिया गया। सन् १८६७ में यह कंपनी गारण्टी कंपनी हो गई और इसका नाम "अवध रुहेलखण्ड रेलवे" हो गया। सन् १८६४ में "इण्डियन ट्राम्वे कंपनी" का संगठन हुआ। इसे सन् १८७० में गारण्टी मिली और इसका नाम कर्नाटक रेलवे हुआ। सन् १८७४ में यह रेलवे सदर्न कंपनी से मिल गई और इन दोनों का नाम "साउथ इण्डियन रेलवे" पड़ गया।

मद्रास रेलवे सरकारी हो जाने के बाद उसके दो भाग कर दिये गये। एक का नाम "मद्रास ऐण्ड सदर्न मरहट्टा रेलवे" रख दिया गया और दूसरे भाग को साउथ इण्डियन रेलवे में मिला दिया। सरकार ने जो लाइनें मोल ले लीं, उन्हें फिर उसने उन्हीं कंपनियों को ठेके पर उठा दिया है, किन्तु मालिक कम्पनियाँ नहीं हैं। बहुत सी लाइनों का प्रबन्ध सरकार खुद करती है। अब सरकार को रेलों से नुकसान नहीं होता, मुनाफा ही होता है। तथापि लगा हुआ मूलधन अभी तक वसूल नहीं हो पाया है। सन् १९१३-१५ में रेल सम्बन्धी सब खर्च देकर सरकार को ३०५६५००००००) रुपया मुनाफा हुआ था और सन् १९१७-१८ में सब खर्च देनेके बाद सरकार का मूलधन का मुनाफा ७॥ फी सैकड़ा मिलने लगा था। सन् १९२७-२८ में रेलवे द्वारा सरकार को २७

अरब रुपयों की आमदनी हुई। यह आमदनी सन् १९२६-२७ से ३१ लाख ज्यादः थी। इस वर्ष जो सन् १९२९-३० का रेलवे बजट कामर्स मेम्बर सर जार्ज रेनो ने लेजिस्लेटिव असेम्बली में पेश किया है उसमें उन्होंने इस वर्ष की आमदनी अनुमानतः १०७३३००००००००) रु० और खर्च ९५०००००००००) रु० रखा है और बताया है कि अगर १७५००००००००) रुपया फौजी रेल-पथ पर घाटे के तौर पर कट जायगा तो सरकार को १०७५००००००००) रु० का लाभ होगा।

पहले पहल सन् १८५३ में बम्बई से थाना तक २१ मील की रेलवे जी० आई० पी० आर० ने शुरू की। यह आरम्भ परीक्षा के तौर पर किया गया था। इसी का अनुकरण सन् १८५४ में ई० आई० आर० ने हबड़ा स्टेशन से पंडवा तक रेल की सड़क तय्यार करके किया। इन परीक्षाओं में दोनों को सफलता मिलने पर और भी कई कम्पनियों का संगठन हुआ। सन् १८५७ के विप्लव (गदर) के बाद सरकार ने रेल का विस्तार अधिक करने का निश्चय कर लिया। सूरत से बड़ौदा तक बी० बी० एण्ड सी० आई० रेलवे सन् १८५५ में चलने लगी। सारांश यह कि सन् १८५९ तक लगभग ८-९ नई रेलवे कम्पनियाँ स्थापित हो गईं और उन्होंने करीब-करीब पाँच हजार मील रेल की पटरी डालने के ठेके प्राप्त कर लिये।

सन् १८६१ में कुल १०२८ मील रेल की सड़क तय्यार हुई। पाँच साल बाद ३३३२ मील हो गई। कलकत्ते की ई० आई० आर० और बम्बई की जी० आई० पी० आर० दोनों सन् १८७० में जबलपुर स्टेशन पर आपस में आकर मिल गईं। इन दोनों रेलों ने महाराष्ट्र और बंगालियों को ला मिलाया। इसी तरह सन् १८७८ में करांची से दिल्ली का मिलाप हुआ। इस वक्त तक बम्बई का दिल्ली से बड़ा दूर का सम्बन्ध था। बम्बई से दिल्ली जानेवाले पहले जी० आई० पी० से जबलपुर तक सफर करके बाद में ई० आई० आर० द्वारा इलाहाबाद होकर दिल्ली पहुँचा करते थे। यह कठिनाई सन् १८८० में "राजपूताना मालवा रेलवे" ने दूर की और बम्बई से दिल्ली जाने का फासला बहुत ही कम कर दिया। सन् १८८० के बाद बहुत सी और-और रेलवे कम्पनियाँ स्थापित हुईं। बंगाल नागपुर रेलवे सन् १८८३ में, सदर्न मराठा रेलवे १८८२ में, इण्डियन मिडलैण्ड रेलवे सन् १८८२-८५ में और आसाम बंगाल रेलवे सन् १८९१ में स्थापित हुई। इनके अलावा और भी कई कम्पनियों का कारोबार जोर शोर के साथ चलने लगा।

कंपनियों को हिन्दुस्थान में, रेलमार्ग बनाने में बड़ी-बड़ी कठिनाइयाँ उठानी पड़ीं; क्योंकि यहाँ के अलग-अलग भागों में भूमि की बनावट जुदे-जुदे

किस्म की है। बंबई इलाके का विन्ध्याचल नामक पर्वत, उत्तरी सरहद्द के पास क्वेटा के रास्ते पर की पर्वतमाला, ब्रह्मपुत्र के बीच के विशाल पर्वत इत्यादि पहाड़ों को फोड़ कर उनमें से रेल का रास्ता निकालना मामूली बात नहीं थी। इंजीनियर लोगों की परीक्षा का नाजुक प्रसंग था। इन पहाड़ों में रेल की सड़क का लेवल साधना बहुत कठिन बात थी। सैकड़ों जगह पर, हर पच्चीस तीस फीट लम्बी सड़क में एक फुट का अन्तर पड़ जाता था। कुल सड़क का लेवल इञ्जीनीयरी-गणित के कायदे के अनुसार ठीक कर सकना बड़ी मुश्किल बात थी। पूर्व बंगाल के पहाड़ी हिस्सों में लगभग ७५ मील लम्बी सड़क पर ३५ बोगदे (सुरंग) तय्यार करने पड़े। पहाड़ों की भाँति प्रचण्ड वेग से बहनेवाली बड़ी २ नदियों का पुल बाँधने का प्रश्न भी बड़ा कठिन था। गंगा, जमुना, नर्मदा, सोन, घाघरा, सिंध, गण्डकी आदि नदियों के ऊपर से रेलका रास्ता ले जाना बड़ी हिम्मत और विद्वत्ता का काम था। पुल तय्यार कर देना तो सहज था, परन्तु तय्यार होने के बाद नदी के चंचल वेग से उसकी रक्षा कर सकना बड़ा कठिन काम था। नदियों की पेंदी में सैकड़ों फीट गहरा गड्ढा खोदने पर भी पत्थर की नींव का कहीं पता नहीं लगता था। भारत में सबसे लंबा पुल पूर्व बंगाल में सोन नदी का है; इसकी लंबाई १०,०५२

फीट है। सारा नाम का पुल भी, जो ईस्टर्न बंगाल रेलवे पर है कारीगरी का अजीब नमूना है। इस पुल के नीचे गंगा नदी अपने साथ जमुना, सोन, गण्डकी आदि कई नदियों को अपने में मिलाकर बहती हैं। इस पुल के बनवाने में लगभग ५ करोड़ रुपया खर्च हुआ था। अस्तु—

इन रेलवे कम्पनियों को शुरू-शुरू में फायदा नहीं हुआ। सरकार को सन् १८६६ तक रेलवे बजट में लगभग १६६३३००००००) रुपयों का नुकसान रहा था। अब, इन दिनों कई वर्षों से रेलों का सिवाय लाभ के हानि उठाने का मौका ही नहीं आता। सरकारी रेलें अनेक कम्पनियों को ठेके पर चलाने के लिये दे दी गई हैं, जिससे असली लाभ कम्पनियों को हो जाता है और हिन्दुस्थान को, जिसके ख़ज़ाने से आज तक का टोटा रेलों को दिया गया है, एक पाई का भी लाभ नहीं होता। रेलवे कम्पनियाँ यूरोपियन तथा ऐंग्लो-इण्डियन कर्मचारियों को खूब बड़ी-बड़ी तनखाहें देती हैं और हिन्दुस्तानी नौकरों को उतनी तनखाह नहीं देतीं। इसके अलावा रेलों की सब सामग्री इंग्लैण्ड से खरीदी जाती है, जिससे इन रेलों का सारा लाभ इंग्लैण्ड को ही मिलता है।

इस समय यहाँ तीन प्रकार के रेलों के मालिक हैं १—सरकार २—देशी रियासतें और ३—कम्पनियाँ। इनके अधिकार में नीचे लिखे अनुसार रेलें हैं—

सरकार	२६१८६ मील
देशी राज्य	४३६७ ,,
कम्पनियाँ	५७४६ ,,

इस समय हिन्दुस्थान में छोटी-मोटी कुल मिलाकर लगभग ३५ रेलवे लाइनें हैं। इनमें लगभग २५ मुख्य हैं। इनकी लंबाई नीचे लिखे अनुसार ता० ३१ मार्च सन् १९२७ तक थी।

सिंगल लाइन	३५५४२·४१ मील
डबल लाइन	३५०६·४७ ,,
मार्ग की लंबाई	३९०४८·८८ ,,
कुल रेल पथ की लंबाई	५२८८६·२७ ,,

खैबर रेलवे ता० २ नवंबर १९२५ ई० को खुली है। इस रेलवे का जो भाग जम्नराल से आरंभ होता है वह १५०० फुट समुद्र से ऊँचा है और लंडीकोटल पर ३५०० फुट ऊँचा हो जाता है। इसका रास्ता ५॥ फुट चौड़ा है। २७ मीलमें ३४ बोगदे (टनेल) हैं।

भारत और सीलोन (लंका) को मिलाने का भी विचार किया गया है। बरमा और नैपाल के लिये रेलवे निकालने की तजवीज हो रही है। बंबई के पास जी० आई० पी० आर० और बी० बी० सी० आई० रेलवे की गाड़ियाँ बिजली से भी चलने लगी हैं।

सन् १९२४-२५ से रेलवे की आमद और खर्च का ब्यौरा भारत-सरकार के बजट में नहीं रखा जाता। रेलवे का बजट अलग कर दिया गया है। केवल वह

रकम मुनाफे की जो सरकार को रेलवे की ओर से दी जाती है, आमदनी में शामिल कर ली जाती है।

रेल की पटरियाँ तीन प्रकार की होती हैं। ये (१) ब्राड गेज (२) मीटर गेज और (३) नेरो गेज के नाम से पुकारी जाती हैं। नीचे लिखे अनुसार उनका माप और मीलों में लंबाई है--

ब्राड गेज	५ फुट ६ इंच	१६३६७'४४ मील
मीटर गेज	३ ,, ३ $\frac{३}{८}$,,	१५६३१'८१ ,,
नैरो गेज ,, ,,	२ ,, ६ ,, या २ ,, ० ,,	३७४६'६३ ,,

सरकार सब कंपनियों से अपना पल्ला अभी तक नहीं छुड़ा सकी है इसलिये भिन्न-भिन्न रेलवे लाइनों का प्रबन्ध अलग-अलग ढंग से होता है। जो लाइनें सरकार की हो गई हैं, उनका सब इन्तजाम सरकार स्वयम् करती है। कुछ रेलों को सरकार ने ठेके पर दे दिया था, उनके ठेके नीचे लिखे वर्षों में खतम हुए हैं और होंगे।

ईस्ट इण्डियन रेलवे	सन् १६२४
ग्रेट इण्डियन पेनिन्सुला रेलवे	,, १६२५
आसाम बंगाल रेलवे	,, १६३१
मद्रास एण्ड सदर्न मरहटा रेलवे	,, १६३७
बंबई बड़ोदा एण्ड सेण्ट्रल इन्डिया रेलवे	,, १६४१
साउथ इण्डियन रेलवे	,, १६४५
बंगाल नागपुर रेलवे	,, १६५०

सन् १९०१-२ में भारत-मंत्री ने रेलों के विषय में जाँच करके सूचना देने के लिये एक कमीशन बैठाया था। उस कमीशन की रिपोर्ट के अनुसार सन् १९०५ में सरकारने एक रेलवे बोर्ड स्थापित किया, जिसमें एक सभापति, एक मंत्री और दो मेम्बर रखे गये। यह बोर्ड भारत-सरकार के अधीन है। इसी बोर्ड द्वारा रेलों के प्रबन्ध-सम्बन्धी तमाम बातें, जैसे नई लाइनें बनवाना, रेलवे नौकरों की तरक्की, खर्च का निश्चय, कार्य-प्रणाली स्थिर करना इत्यादि, निश्चित होती हैं। कुछ समय के बाद सरकार ने इस रेलवे बोर्ड के सभापति को अपना एक मन्त्री बना लिया, ताकि रेलवे मामलों के साथ सरकार का एक बहुत गहरा सम्बन्ध हो जाय।

जिन कम्पनियों को सरकार ने अपनी लाइनों का ठीका दे रखा है, उनपर भी सरकार का बहुत कुछ अधिकार है। उनके सम्बन्ध में सरकार ने किराये का घटाना बढ़ाना, हिसाब का जाँचना, रुपया अपने खजाने में जमा कर लेना, खर्च पर पूरी निगाह रखना आदि बातें अपने ही अधिकार में रखी हैं। अंग्रेजी कम्पनियों का बोर्ड इंगलैण्ड में भी है, जिसकी तरफ से, प्रतिनिधि की हैसियत से एक एजेन्ट यहाँ रहता है।

एक रेलवे कमीशन सन् १९२० के नवम्बर महीने में भारत-मन्त्री ने फिर इसलिये बैठाया कि वह

रेलवे सम्बन्धी शिकायतों और त्रुटियों की जाँच करे। इस कमेटी के दस मेम्बर थे। जिनमें सात अंग्रेज और सर राजेन्द्रनाथ मुकर्जी, श्रीनिवास शास्त्री तथा पुरुषोत्तमदास ठाकुरदास तीन भारतीय थे। इन सात अङ्ग्रेजों में तीन अङ्ग्रेज तो ऐसे थे जिन्हें भारत का कुछ भी अनुभव नहीं था। शेष तीन बड़े ही अनुभवी थे तथा एक अंग्रेज व्यापारियों का प्रतिनिधि था। इस जाँच कमेटी ने १४२ सज्जनों की गवाहियाँ लीं। इनमें केवल ४२ गवाह ही गैर सरकारी भारतीय थे। इस कमेटी का खर्च, लगभग ४ लाख ८० हजार रुपये पहुँचा था। इस कमेटी की जाँच के सब कागज़ात बड़ी-बड़ी ४ जिल्दों में प्रकाशित हुए हैं। इस रिपोर्ट में भारत-सरकार की परोक्ष हानि को दिखाते हुए, भारतवासियों को जो-जो हानि-लाभ रेलों द्वारा होते हैं उनका जिक्र किया गया है। रेलवे से होनेवाले फायदे और नुकसान हम आगे चलकर बतलावेंगे। यहाँ हमें सारी रिपोर्ट में से यह निकाल कर देखना है कि "थर्ड क्लास" के मुसाफिरों के विषय में रिपोर्ट क्या कहती है। तीसरे दर्जे के मुसाफिरों के सम्बन्ध में कमेटी के सामने कई शिकायतें पेश की गईं। सारांश में वे ये हैं—

१—गाड़ी में यात्रियों की बहुत भीड़ होती है।

२—तीसरे दर्जे के यात्री कभी-कभी माल गाड़ी के डिब्बों में बिठाये जाते हैं।

३—तीसरे दर्जे की गाड़ियों की सफाई पर पूरा ध्यान नहीं दिया जाता।

४—कई स्टेशनों के प्लेटफार्मों पर पानी का अभाव रहता है।

५—कई स्टेशनों पर ठीक खाद्य-पदार्थ नहीं मिलते।

६—बड़े-बड़े स्टेशनों पर मुसाफिरखाने छोटे और खराब रहते हैं।

७—टिकट खरीदने में कभी कभी यात्रियों को बड़ी कठिनाई होती है। और

८—रेलवे के नौकरों का तीसरे दर्जे के मुसाफिरों के साथ अच्छा व्यवहार नहीं होता।

ये मोटी-मोटी शिकायतें "थर्ड क्लास" के मुसाफिरों की थीं। है भी ठीक, इनमें एक भी झूठी नहीं कही जा सकती। रात-दिन हम लोगों के साथ रेल की मुसाफिरी में ऐसी घटनाएँ होती रहती हैं। इन शिकायतों को कमेटी ने दूर करने के लिये सिफारिश की थी कि "मेलों के समय में एक कम्पनी को दूसरी कंपनी से कुछ समय के लिये डिब्बे उधार ले लेना चाहिये। रेलवे के अफसरों को सफाई की तरफ पूरा-पूरा ध्यान देना चाहिये और तीसरे दर्जे के यात्रियों के कष्ट दूर करने का प्रयत्न करते रहना चाहिये। पैसेंजर-सुपरिण्टेण्डेण्ट बड़े-बड़े स्टेशनों पर मुकर्रर किये जावें, जिनका कर्तव्य मुसाफिरों को हर प्रकार की मदद पहुँचाना हो। हमारी समझ में

इन अफसरों की नियुक्ति से ही मुसाफिरों के कष्ट दूर हो जावेंगे। गाड़ी में यात्रियों की भीड़ कम करने के लिये यह आवश्यक है कि हरएक ट्रेन में थर्ड क्लास के डिब्बों की संख्या बढ़ा दी जावे और ट्रेनों (गाड़ियों) की भी संख्या बढ़ाई जाय।" इत्यादि।

कमेटी की इन सिफारिशों पर कितना अमल किया गया, इसे तो रेलवे कम्पनियाँ ही जानें, परन्तु यह देखा जाता है कि थर्ड क्लास के यात्रियों का कष्ट ज्यों-का-त्यों बना हुआ है। फर्स्ट क्लास और सेकेण्ड क्लास के मुसाफिरों से रेलवे कम्पनियों को कुछ भी लाभ नहीं होता। जितनी भी आमदनी मुसाफिरों द्वारा रेलों को होती है उसका अधिक हिस्सा थर्ड क्लास के मुसाफिरों से होता है। हम यहाँ सन् १९२४-२५ की आमदनी और खर्च का नक्शा देते हैं। जिससे स्पष्ट हो जावेगा कि व्यापारी माल के अतिरिक्त यदि रेलों को कोई बड़ी आमदनी है तो वह यात्रियों द्वारा ही है--

आय	सन् १९२४-२५	व्यय	
व्यापारी माल	४२·७१	रेल-पथ	१२·२८
कोयला	११·६९	लोको	२१·७३
यात्री	३२·१९	कैरेज, वैगन	७·९९
पार्सल वगैरः	५·३९	ट्रैफिक	६·७७
अन्य	२·९१	अन्य	१०·६४
		सूद, किस्त	२६·०१
योग	९४·८९	योग	८८·४२

आमदनी में से खर्च निकालने के बाद सरकार को ६'४७ मुनाफा होता है। सन् १९२७ के यात्रियों की संख्या और उनके द्वारा आमदनी का नक्शा नीचे दिया जाता है, जिससे आप पता लगा सकेंगे कि थर्ड क्लास पैसेंजरों से रेलवे को कितनी आमदनी होती है।

सन् १९२७

पहला दर्जा	१०१२१०० यात्री	११७९८००)	रु० आय
दूसरा दर्जा	१०००९३०० ,,	१८८३०००)	,, ,,
डेवढ़ा दर्जा	१४९४४८०० ,,	१९१७२००)	,, ,,
तीसरा दर्जा	५७८४०८६००,,	३३४४०२००)	,, ,,
जोड़--	६०४३७१८०० ,,	३८११८९००)	,, ,,

थर्ड क्लास के यात्रियों द्वारा रेलों की आमदनी दिनों दिन बढ़ती ही जा रही है। सन् १९२१-२२ में १८ करोड़ ४१ लाख रुपये, सन् १९२२-२३ में ३२ करोड़ २० लाख रुपये, सन् १९२३-२४ में ३२ करोड़ ६१ लाख रुपये, सन् १९२६-२७ में ३३ करोड़ ४४ लाख रुपये की आमदनी रेलों को थर्ड क्लास के मुसाफिरों से हुई। साथ ही यह बात ध्यान में रखने की है कि पहले और दूसरे दर्जे के यात्रियों से होनेवाली आमदनी दिनोंदिन गिरती ही जा रही है। ज़रा नीचे का नक्शा देखिये।

	दर्जा अव्वल	दोयम
सन् १९२१-२२	१३८०००००	२२८०००००
सन् १९२२-२३	१३९०००००	२११००९००

सन् १६२३-२४	१२६०००००	१६५०००००
सन् १६२६-२७	११७७८००	१८८३०००

हिसाब लगाने पर मालूम होता है कि पहला, दूसरा और मँझला, इन तीनों दर्जों के यात्रियों से जो आमदनी रेलोंको सन् १६२७ में हुई, उसको सात गुनी से कहीं ज्यादः आमदनी तीसरे दर्जे के मुसाफिरों से हुई। सारांश यह कि यात्रियों के मद में जो भी रुपया रेलों के हिसाब में जमा होता है, उसका अधिक भाग थर्ड क्लास के यात्रियों से ही मिलता है।

अब हमें एक नये प्रकार की रेल से पाठकों का परिचय और कराना है, उसके बाद रेलवे का इतिहास समाप्त हो जावेगा। इस नये ढङ्ग की रेल का नाम "रोड रेल" है। यह रेल गाड़ी घोड़ों के चलने की सड़क से सटाकर बनाई जाती है। यह अमेरिका आदि देशों में चलती है। वहाँ की देखा-देखी यहाँ हिंदुस्तान में भी इस रेल को बनवाया गया। इसकी पटरी नेरो गेज से भी कुछ कम चौड़ी अर्थात् २ फुट की होती है। बम्बई की तरफ़ इसे चलाया गया। मध्यभारत में ग्वालियर राज्य में उज्जैन से आगर तक ४१ मील इस रेल की पटरी डाली गई। होलकर स्टेट में भी इसके लिये प्रयत्न किया गया, परन्तु सफलता कहीं भी नहीं मिली। इस रेल का एंजिन दूसरी रेलों के एंजिनों से भिन्न प्रकार का होता है। एक चौकोर डिब्बे की शक्ल में होता है। उसमें धुआँ निकालने की चिमनी

को देख कर ही यह कहा जा सकता है कि यह एंजिन है, नहीं तो उसे एकाएकी कोई एंजिन कह ही नहीं सकता। इस एंजिन के आगे की तरफ रबर के दो ठोस पहिये-लारी मोटरों के ठोस पहियों की शक्ल के-लगे होते हैं जो पटरी के आस-पास जमीन पर घिसते हुए चला करते हैं। इस गाड़ी के एंजिन की रफ्तार तेज नहीं होती, वह धीमा चलता है। आगे की परमात्मा जाने; किन्तु अभी तक जहाँ-जहाँ यह रोड रेल बनाई गई वहाँ-वहाँ उसे असफलता ही रही।

यह भारतीय रेलों का संक्षिप्त इतिहास हुआ। अब हम रेलों से होनेवाले हानि-लाभ पर कुछ अपने विचार प्रकट करेंगे।

रेल से लाभ

मोटी नज़र से देखा जाय तो, रेल के द्वारा तीर्थ-यात्रा आदि धार्मिक कृत्य थोड़े समय और थोड़े खर्चे में हो जाते हैं। पहले जब रेल नहीं थी तो तीर्थ-यात्रा कर लेनी सहज बात नहीं थी। लोग इकट्ठे होकर तीर्थों के लिये निकलते थे और गाड़ी घोड़ोंसे धीरे-धीरे चल-कर बहुत दिनों में—महीनों में—यात्रा से लौटते थे। इस प्रकार की यात्रा में बड़ा ही कष्ट होता था। परंतु आज कल एक बच्चा भी निर्भयतापूर्वक नियत समय और मामूली खर्चे में तीर्थ-दर्शन, बिना किसी कष्ट के,

कर सकता है। वह मार्ग जो पहले अधिक व्यय और अधिक समय में तय किया जाता था, रेलों के कारण कम खर्च और थोड़े से समय में तय हो जाता है। रेलों से एक बड़ा भारी लाभ यह भी है कि अपने स्वास्थ्य को ठीक करने के लिये, जलवायु बदलने की गर्ज़ से सहज ही चाहे जिस उपयुक्त स्थान पर पहुँचा जा सकता है। इसी प्रकार रोज़गार-धन्धे के लिये भी दूर-से-दूर के स्थानों पर भी जल्दी आ-जा सकते हैं। यदि रेलें न होतीं तो कुत्ता काटने पर कसौली और क्षयरोग हो जाने पर भुवाली सेनीटोरियम तक पहुँचना कठिन हो जाता। आज धन कमाने की गरज़ से ही असंख्य बिना पढ़े-लिखे देहाती मजदूर दूर देशों में पहुँच गये हैं यह रेलों ही की कृपा है। रेलों के द्वारा व्यापार में बड़ी-बड़ी सहूलियतें हो गई हैं। जो माल पहिले नावों अथवा बैल गाड़ियों में भरकर अनेक कठिनाइयाँ सहकर एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजा जाता था, आज रेलों द्वारा सहज ही में जहाँ-तहाँ पहुँचा दिया जाता है। रेल के लिये न तो वर्षा बाधक है और न शीत अथवा गर्मी ही। बड़े-से-बड़े अगम पहाड़ों को पार करती हुई, तथा मीलों चौड़ी नदियों को पार करके, रेलें माल असबाब को सुरक्षित यथास्थान पहुँचाती रहती हैं। रेलों के द्वारा व्यवसाय की सामग्री सुगमता, शीघ्रता, एवम् कम खर्च में देश के सभी भागों में पहुँचती रहती हैं। यही कारण

है कि अन्न की, दुरभिक्ष के समय में, कहीं पर कमी नहीं होने पाती। महँगा सस्ता मिलही जाता है। रेलों ही के कारण आज भारत में अन्न आदि वस्तुओं का लगभग एकसा ही भाव सब जगह पाया जाता है। यह नहीं होता कि पंजाब में गेहूँ एक रुपये के २० सेर बिकरहे हों, और बंगाल में रुपये के चार सेर भी न मिलें। इसी तरह यदि पंजाब में बहुतायत से गेहूँ पैदा हुआ, यहाँ तक कि रुपये का २५-३० सेर बिक सकता हो, तो रेल उसे उठाकर मद्रास पहुँचा देगी। नतीजा यह होगा कि दोनों स्थानों पर गेहूँ का भाव समान हो जावेगा। यह माना जा सकता है कि पंजाब का भोजन छीनकर मद्रास के मुहँ में डाल दिया यह बुरी बात है, किन्तु मद्रास को अन्न के दाने दाने के लिये तरसते हुए प्राण त्याग करते हुए देखना भी तो अनुचित था। हमें रेलों ही के कारण बहुत सी चीजें अपने अपने बाजारों में दूर के शहरों की कीमत से कुछ अधिक मूल्य पर प्राप्त हो जाती हैं। रेलों द्वारा व्यापारियों को बहुत ही लाभ पहुँचा है।

रेल से नुक़सान

रेलों से देश को जितना लाभ हुआ है, उससे कहीं अधिक हानि पहुँची है। भारतवर्ष को रेलों की जरूरत नहीं थी, किन्तु अब तो भारतवासियों का

जीवन ऐसा बन चुका है कि बिना रेल के कामों का चलना अत्यन्त कठिन हो गया है। हम रेल के आदी हो गये हैं। हमने देखा है कि वे देहाती भाई जो अब भी मेहनत से नहीं घबराते हैं और सुबह से शाम तक २०-२५ कोस आसानी से चल सकते हैं, वे भी दो-दो चार-चार मील जाने तक के लिये रेल के स्टेशनों पर घण्टों तक बैठे रेल का इन्तजार किया करते हैं। इतने समय में तो वे पैदल चलकर उस गाँव तक मजे में पहुँच सकते थे; परन्तु भारतवासी दिनोदिन रेलों के आदी बनते जा रहे हैं। रेलों ने भारतवासियों को आलसी बना दिया। रेलों के कारण यात्रा में लोग खर्च भी अधिक करने लगे। बात-बात में झट टिकट लिया और रेल में बैठकर साधारण से काम के लिये १०-५ स्टेशन तक चक्कर काट आये। पहिले यात्रा कठिन होने से लोग छोटी-छोटी जरूरतों पर घर से नहीं निकल पड़ते थे। रेलों से भारतीय शिल्प को एक बड़ा भारी जबर्दस्त धक्का पहुँचा है। स्वर्गीय महादेव गोविन्द रानाडे ने लिखा है कि—

"रेलों ने हमारे शिल्प को बड़ी भारी हानि पहुँचाई है। जहाँ छोटे-छोटे शिल्पकार थोड़ी पूँजी और थोड़े विस्तार से दस पाँच चीजें तय्यार करके लाभ उठाते थे, वहाँ आज बड़े-बड़े कार-खानों की चीजें पहुँचकर उनसे सस्ती बिकती हैं और उन शिल्पकारों की चीजें महँगी पड़ती हैं।

परिणाम यह होता है कि उन्हें अपना कारोबार बन्द करना पड़ता है।"

देश में शिल्प-विद्या को समूल नष्ट कर देने में रेल भी कई कारणों में से एक मुख्य कारण है। रेल के कारण लाखों करोड़ों शिल्पी बिना रोजगार के होकर भूखों मरने लगे। रेलों से सरकार को भी कुछ लाभ नहीं हुआ। सर दीनशा इदुलजी वाचा ने कहा था कि—

"रेलों ने सरकार को दिवालिया बना दिया है। सन् १९१४ में सरकारी ऋण २७४०००००० से भी अधिक था, जिसमें से केवल रेलों के लिये सरकार को २२२०००००० रुपये कर्ज लेने पड़े थे। सन् १९१० तक सरकार को रेलों के हिसाब में ४१ करोड़ रुपया देना पड़ा था। यदि सरकार रेलों की उलझन में न पड़े तो खजाने में बहुत कुछ रुपया इकट्ठा हो सकता है, जिससे दूसरे कई प्रजा हित के काम किये जा सकते हैं।"

रेलें भारतीय उन्नति में पूर्ण रूप से बाधक हैं; क्योंकि सरकार रेलों के खर्च में इतना बजट मंजूर कर देती है कि उसे भारतवासियों की शिक्षा आदि जरूरी कामों तक के लिये यह कह देना पड़ता है कि बजट में गुञ्जाइश नहीं है। रेलों से भारतवासियों की गरीबी दिन-प्रति-दिन बढ़ती जा रही है। कारण यह कि भारत में जन संख्या इतनी ज्यादः है कि उसे रात-दिन काम में लगे रहने की जरूरत है। रेलों के द्वारा

शिल्प तो चौपट हो ही गया, साथ ही माल असबाब ढोने-वाले लोग भी बेकार हो गये। उस माल को जिसे कि हज़ारों बैलों पर, गाड़ियों में अथवा नावों में लाद कर एक स्थान से दूसरे स्थान तक किसी समय पहुँचाया जाता था, वही रेल, कम खर्च में, एक ही चक्कर में पहुँचा देती है। वे भारतीय बेकार हो गये। भोजन के लाले पड़ने लगे। लाखों करोड़ों बैल निकम्मे हो गये। उनके मालिकों को उन्हें पालना तक भार हो गया। रेलों से हानि मनुष्यों ही को नहीं, बल्कि पशुओं तक को पहुँची है।

आर्थिक दृष्टि से भी रेलोंने भारत का धन खूब ही इधर-से-उधर किया है। भारत में रेलें उसी धन से चालू की गई हैं जो भारत ही के व्यापार आदि से अँगरेजों ने कमाया था। ऐसे कामों के लिये कभी एक पैसा भी इंगलैण्ड से लाकर हिन्दुस्तान में खर्च नहीं किया गया। ता० १४ अगस्त सन् १८६० को पार्लामेण्ट के मेम्बर स्विफ्ट मेकनील ने कहा था--

It has been computed that out of every shilling spent in railway enterprise, 8 d. makes its way to England.

अर्थात्--यह हिसाब लगाया जा चुका है कि जितना धन भारत में रेलों पर खर्च किया जाता है, उसमें से हर शिलिंग पीछे आठ पेंस (अर्थात् दो-तिहाई) इंगलैण्ड चला जाता है।

इसके अलावा रेलों की आमदनी का एक पैसा भी भारत में नहीं रहता। जो कुछ भी मुनाफा होता है। वह विदेशियों के जेब में चला जाता है; क्योंकि कम्पनियाँ विदेशियों की हैं। कोई यहाँ यह कहे कि "रेलों के द्वारा सैकड़ों भारतवासियों की जीविका चल रही है।" तो इसका उत्तर यह है कि रेलों के द्वारा लाखों और करोड़ों देशवासियों की रोजी भी नष्ट हो चुकी है, जैसा कि हम पीछे बता आये हैं। रेलवे के नौकरों के विषय में भी यह आम शिकायत है कि इसमें बड़े-बड़े पद भारतवासियों को नहीं दिये जाते। रेलवे विभाग में लगभग आठ लाख व्यक्ति काम करते हैं। इनमें लगभग १० हजार यूरोप-निवासी हैं, बाकी सब भारतवासी हैं। ये १० हजार अंग्रेज सभी बड़े-बड़े ओहदों पर हैं। भले ही योग्यता में भारतवासियों से कम हों, परन्तु तनखाहें तो भारतीयों से दुगुनी होती हैं*। रेलवे में लगभग दो हजार बड़े-बड़े ओहदे हैं, उन पर लगभग २०० भारतवासी ही पहुँच सके हैं। सारांश यह कि भारत का धन रेलों द्वारा विदेशों को चला जा रहा है।

*सन् १९१० में मुझे जी० आई० पी० रेलवे के बीना स्टेशन पर पेड कैन्डीडेट रहनेका मौका मिला था। नम्बर-टेकरकी हैसियत से काम करना पड़ता था। मेरे पास एक योरोपियन काम सीखने की दृष्टि से भेजा गया था। वह १८-१९ वर्ष का युवक था। उन दिनों वह असिस्टेन्ट डिस्ट्रिक्ट ट्रैफिक सुपरिंटेंडेंट के पद पर

भारत में रेलों के चलाने का मुख्य उद्देश है भारत से गेहूँ कपास आदि का समुद्रों के पार भेजना और विलायत का बना हुआ माल भारत के कोने-कोने में पहुँचाना और वक्त-जरूरत के फौजों को इधर से उधर तक पहुँचा सकना। इसी कारण फौजों को ढाने और रसद लाने तथा ले जाने के सम्बन्ध में सरकार ने शुरू-शुरू में रेलवे कम्पनियों से एक इस सम्बन्ध की शर्त अलग ही करा ली थी। सन् १८५७ के विप्लव में अंग्रेजी सरकार को प्रबन्ध के लिये तथा भारतवासियों के दमन के लिये फौजें जल्दी नहीं भेज सकने की निरुपायता अत्यन्त महसूस हुई थी। विप्लव शान्त होने के बाद से ही सरकार ने इस ओर ध्यान दिया और सारे भारत में रेलों का जाल पूर दिया। स्वर्गवासी गोपालकृष्ण गोखले ने वेलबी कमीशन के सामने यह स्पष्ट कहा था कि--

"सरकार ने केवल अपने शासन-सम्बन्धी स्वार्थ तथा यूरोप के व्यापारियों के ही लाभ के लिये इन रेलों को बनवाया है और इन्हीं कारणों से अधिकाधिक कर्ज लेकर उनको बढ़ाती जा रही है।"

रेलों से स्वास्थ्य (तन्दुरुस्ती) को भी बड़ी

नियुक्त था। उसे एक दिन अंग्रेजी में इंक (Ink) लिखने का मौका आया तो उसने Inc लिखा था। ऐसे ऐसे लोग भी पाले जाते हैं -- सो भी उच्च पदों पर! मैं १५) रुपया मासिक पाता था और वह लगभग १००) रुपया!! -- लेखक

हानि पहुँची है। रेलों द्वारा यात्रा करनेवाले लोग छूत की बीमारियाँ अपने पल्ले बाँध कर एक जगह से दूसरी जगह ले जाकर छोड़ देते हैं। प्लेग उन बीमारियों में से एक मुख्य बीमारी उदाहरण के रूप में सामने रखी जा सकती है। इसके अतिरिक्त, बहुत सी ऐसी बीमारियाँ हैं जो रेलों द्वारा एक नगर से दूसरे नगर पहुँचती-पहुँचती अब सर्वत्र फैल गई हैं। रेल के स्टेशनों पर के मुसाफिर खाने, टट्टियाँ, पेशाबघर सभी बड़े गन्दे रहते हैं। रेल गाड़ियों में के पाखाने, उनके फर्श इत्यादि भी साफ नहीं होते। स्टेशनों पर मिठाई पूरी आदि खराब, नकली, चर्बी मिले या तेल मिले घी में बनी हुई, बासी, बदज़ायके होती हैं। स्टेशनों पर बिकने वाली चाय दो-दो दिन तक बार-बार गरम करके मुसाफिरों को बेची जाती है। फलों के लिये अलबत्ता कहा जा सकता है कि वे भले-बुरे देखे जा सकते हैं--किन्तु सभी यात्री फलों पर गुज़र नहीं कर सकते; क्योंकि वे मँहगे होते हैं। कई स्टेशनों पर तो सड़े बासी फल भी बिकते रहते हैं। इसी तरह नलों का पानी भी स्वास्थ्य के लिये ठीक नहीं होता; क्योंकि उन नलों के अन्दर की, जिनमें रात-दिन पानी बहता है, सफाई नहीं की जा सकती। सर्दी के दिनों में नलों से बर्फ की भाँति ठंडा और गर्मी के दिनों में उनमें से उबलता हुआ गर्म पानी मिलता है।

पत्थर के कोयले का धुआँ तन्दुरुस्ती के लिये बहुत ही बुरा है। रेल के यात्रियों को इससे बचना बहुत ही कठिन--असंभव है। वे हलवाई, खोनचे-वाले वगैरः, जो स्टेशन तथा प्लेटफार्म पर बेचने का ठीका ले रखते हैं, खाने को सभी चीजें पत्थर के कोयले की आग पर बनाते हैं। इससे भी यात्रियों की तन्दुरुस्ती पर बुरा असर पड़ता है।

रेलों के कारण हमारे देश की लाखों बीघा ज़मीन जिसमें अन्न और घास पैदा होता था रुक गई; जिसके कारण भारत के मनुष्य और पशुओं के खाद्य-पदार्थों में थोड़ी कमी आ गई। साथ ही बड़े-बड़े जंगल रेल-पथ बनाने के लिये काट डाले गये और रेलों द्वारा सुगमता से लकड़ी इधर से उधर पहुँच सकने के कारण भी बड़े-बड़े जंगल मैदान बना दिये गये, जिसका नतीजा यह हुआ कि भारतवर्ष में अब बारिश अच्छी नहीं होती--कम पानी बरसता है।*

रेलों द्वारा दुर्घटनाएँ होती ही रहती हैं। अभी तक भारत में कुल २३४६३ दुर्घटनाएँ हुई हैं। ५२१ बार रेलें आपस में लड़ी हैं। यहाँ आपस में रेलें इतनी बुरी तरह टकरा चुकी हैं कि आज तक पृथ्वी के किसी भाग में भी नहीं टकराई होंगी। सन् १९१४

---

*यह बात वैज्ञानिकोंने सिद्ध कर दी है कि जंगल जितने ज्यादः होते हैं उतना ही पानी भी अधिक बरसता है। वृक्षहीन स्थानों में पानी की कमी रहती है। —लेखक

में शिकोहाबाद (यू०पी०) के पास रेलों का टकरा जाने का अत्यन्त भयानक दृश्य था। बेलूर रेल दुर्घटना का विषय अभी ताजा ही है। सरकारी आँकड़ों पर से मालूम होता है कि आज तक २८६३ मनुष्य रेलों द्वारा जान से मरे हैं और ५७३६ घायल हुए हैं। यह तो मनुष्यों की दशा है। पशुओं की तो संख्या ही नहीं। बैल, गाय, भैंस, बकरियाँ, ऊँट, घोड़े, कुत्ते, गधे तथा अन्य जंगली जानवर रात दिन कटते ही रहते हैं।

कई रेल लाइनों के दोनों ओर तार की बागड़ नहीं लगाई गई है। ब्रान्च लाइनों पर अक्सर दोनों ओर तार नहीं लगाये जाते। इसके कारण बहुत से प्राणी रेलों से कटते रहते हैं।

जिस तरह हरेक वस्तु से हानि लाभ और दोनों ही है उसी तरह रेल से लाभ है तो हानियाँ भी कुछ कम नहीं हैं, परन्तु अब इन हानियों के कारण हम रेलों को छोड़ नहीं सकते, क्योंकि हमलोग रेल के जाल में इस तरह फँस गये हैं कि अब इससे छूटने में दुःख-ही-दुःख होगा। समय के अनुसार हमें रेलों की जरूरत है। जब रेलें नहीं थीं तब हमारी नाते रिश्तेदारियाँ पास-पास ही होती थीं और हमें इतनी आवश्यकताएँ नहीं थीं। परन्तु आज बेटा बम्बई है तो बाप कलकत्ते में, और पति मद्रास है तो पत्नि लाहौर में। इसके अतिरिक्त हमारी दैनिक आवश्य-

कताएँ इतनी जरूरत से ज्यादः बढ़ गई हैं कि अब हम रेलों से दूर रह कर सुखी नहीं रह सकते। इस समय केवल हमें इनके सुधार की ओर ध्यान देने की जरूरत है। सब से बड़ा सुधार यही है कि विदेशी कम्पनियों से रेलों को लेकर सरकार भारतीय कम्पनियाँ कायम करके उनके हाथों इनका ठोका सौंप दे।

यह हमारा विषय न होने के कारण इस पर अधिक नहीं लिख सकते। अब हम थर्ड क्लास के मुसाफिरों को अपने अधिकारों तथा कर्तव्यों के विषय में सूचना देंगे।

कुछ जानने-योग्य बातें

रेलवे सम्बन्धी जानने योग्य बातों को हम यहाँ थर्ड क्लास के यात्रियों के लिये लिख देना चाहते हैं, ताकि वे किसी के धोखे में न आने पावें।

हद

रेलवे स्टेशन के पास कुछ दूर तक जो लोहे के तार की बागड़ (फेन्सिंग) होती है, वह "रेलवे बाउण्डरी" कहलाती है। वह सरकारी हद मानी जाती है। यदि किसी रियासत में ऐसी रेल का स्टेशन हो, जो रेल कि रियासत की न हो तो वह 'रेलवे बाउण्डरी' ब्रिटिश सरकार की हद मानी जाती है।

सूचनाएँ

रेलवे की हद में घुसने से पहिले यह अच्छी तरह देख लो कि जिस रास्ते से तुम जा रहे हो कोई सूचना, नोटिस या वार्निंग तो वहाँ नहीं लगा है। यदि हो तो पहिले उसे पढ़ लो और बाद में उसीके अनुसार कार्य करो।

मुसाफिरखाना

स्टेशन बाहर जो ठहरने के लिये सायादार बरामदा या मकान सा बना होता है, उसे मुसाफिरखाना कहते हैं। यही मुसाफिरखाना थर्ड क्लास के यात्रियों के लिये बना होता है। फर्स्ट क्लास और सेकण्डक्लास के मुसाफिरों के लिये स्टेशनके अन्दर की ओर अलग-अलग कमरे बने होते हैं। छोटे-छोटे स्टेशनों पर जहाँ जरूरत नहीं होती, फर्स्ट और सेकण्ड क्लासके यात्रियों के लिये कोई कमरा नहीं रखा जाता। हाँ, थर्डक्लास के लिये मुसाफिरखाना जरूर होता है।

थर्ड क्लास के मुसाफिरखाने अक्सर ऐसे बने होते हैं, जिनमें वर्षा, धूप और सर्दी अच्छी तरह दूर-दूर तक लोगों की खबर लेती है। इनमें यात्रियों को बड़ा ही कष्ट होता है। समझदार मुसाफिरों को चाहिये कि थर्ड क्लास मुसाफिरखाने के उचित सुधार के लिये आन्दोलन करें और अधिकारियों को अपने कष्टों की सूचना देते रहें।

बेञ्च

थर्ड क्लास मुसाफिरखानों में पत्थर, काठ अथवा लोहे की बेञ्चें बनी होती हैं। ये तिपाइयाँ मुसाफिरों के बैठने-उठने के लिये बनाई या रखी जाती हैं। जो भी इन पर बैठना चाहे बिना किसी संकोच के अच्छी तरह बैठ सकता है। अगर तिपाइयाँ काफी न हों तो रेलवे अधिकारियों को इसकी सूचना दे देनी चाहिये। इस प्रकार यदि मुसाफिरों की सूचनाएँ लगातार पहुँची तो अधिकारियों को तिपाइयाँ अवश्य बढ़ानी पड़ेंगी।

तिपाइयों पर सामान नहीं रखना चाहिये और न सोना ही चाहिये। हाँ यदि मुसाफिरखाने में कोई आदमी ही न हो या कम हों तो सो सकते हैं। रात के वक्त अक्सर मुसाफिर तिपाइयों को सोने की इच्छा से टटोलते हैं। परन्तु देखा गया है कि स्टेशनों पर उन तिपाइयों पर रेलवे पुलिस के सिपाही, हलवाई, खोनचेवाले, चाय दूध वाले, फलवाले और रेल के पोर्टर सोते हैं। बेचारे मुसाफिर वहाँ गन्दे मैले फर्श पर पड़ रहते हैं। समझदार यात्रियों को इस अन्याय का तीव्र विरोध करना चाहिये।

सफाई

मुसाफिर खाने की सफाई के लिये एक भंगी मुकर्रर होता है। यदि साफ न हो तो

स्टेशन-मास्टर को सूचना देकर मुसाफिरखाना साफ कराना चाहिये। साथ ही यात्रियों को भी ध्यान रखना चाहिये कि मुसाफिरखाने के फर्श को मैला न करें। फलों के छिलके, जूठे दोने, कागज, सिगरेटों के बक्स, सिगरेट और बीड़ियों के टुकड़े, पानी, थूक, कफ आदि वहाँ डाल कर उसे मैला नहीं करना चाहिये।

ठहरना

मुसाफिरखाना उसी समय तक ठहरने के लिये है, जिस ओर आपको जाना हो उस ओर की पहली गाड़ी, जिसमें आप जा सकते हों, आ जावे। रात दिन का पड़ाव डालने के लिये मुसाफिरखाना नहीं है। यदि अधिक ठहरना हो तो पास की कोई धर्मशाला या सराय तजवीज़ कर लेनी चाहिये।

अक्सर देखा गया है कि रात के वक्त मुसाफिरों को रेलवे पुलिस मुसाफिरखाने में नहीं ठहरने देती, और पास की सराय अथवा धर्मशाला में भगा देती है। यदि आप गाड़ी बदलने के लिये वहाँ उतरे हैं तो पुलिस का ऐसा करना अन्याय है और आप वहीं डटे रहें। यदि वह यह धमकी देवे कि "नुकसान हो जावे तो हम जिम्मेवार नहीं" तो उससे कहो कि सरकार ने तुम्हें इसी लिये नियुक्त किया है कि मुसाफिरों की जान व माल की हिफ़ाजत रखो।

रेलवे पुलिसवाले अक्सर पास की सराय और धर्मशालावालों से मिले होते हैं। इसी कारण ज्यादः-तर मुसाफिरों को वहाँ ठहरने नहीं देते।

टाइमटेबुल

यह वह कागज है जो मुसाफिरखाने में, बड़ा लम्बा-चौड़ा, दीवार पर चिपका रहता है और जिसमें रेलगाड़ियों के आने-जाने का ठीक समय छपा रहता है। बड़ी-बड़ी रेलवे कम्पनियों के टाइम-टेबुल अलग-अलग छपे होते हैं। ये हिन्दी में भी होते हैं। इनमें आप अपने रवाने होने तथा पहुँचने का वक्त अच्छी तरह देख सकते हैं। इनमें नक्शा भी होता है, उससे आप अपने आने-जाने का सीधा और मन-चाहा रास्ता भी सोच सकते हैं। टाइमटेबुल देखने का तरीका आना जरूरी है। जिन्होंने पहिले कभी न देखा हो, वे एकाएकी उसे देखकर कुछ नहीं समझ सकते। जहाँ टाइमटेबुल मुसाफिरखाने में न लगा हो, वहाँ वह स्टेशन के सामने की दीवार पर लगा होता है, यदि देखने की इच्छा हो तो गाड़ी आने से पूर्व जाकर देख सकते हो। अंगरेजी में हो तो स्टेशन-मास्टर को सूचना दीजिये कि भविष्य में यहाँ हिन्दी में चिपकायें।

किताब की शक्ल के टाइमटेबुल भी स्टेशनों पर मोल बिकते हैं, जिन्हें खरीद कर अपने साथ रखा जा

सकता है। स्टेशन पर "ह्वीलर कम्पनी" की एक दूकान होती है उस पर पूछने से टाइमटेबुल मिलेंगे। यह दूकान जंक्शन स्टेशनों पर या जहाँ यात्रियों की भीड़ अधिक होती है, वहीं रखी गई है। अंगरेजी में तो टाइमटेबुल मिलते ही हैं; किन्तु अब हिन्दी में भी मिल जाते हैं। हर एक कम्पनी अपना टाइमटेबुल अलग-अलग पुस्तकाकार छपवाती है। कई कम्पनियाँ हिन्दी में भी छपाने लगी हैं। ये टाइमटेबुल टिकट देनेवाले बाबू से भी पैसे देने पर मिल जाते हैं। तमाम भारत की रेलों का टाइम-टेबुल भी अब हिन्दी में छपने लगा है और प्लेटफार्म पर ह्वीलर की दूकान पर ॥) में मिलता है।

किराया

किराया बतानेवाला एक बोर्ड भी टिकट बँटनेवाली खिड़की के पास ही कहीं लगा होता है। जहाँ आपको जाना हो वहाँ तक का किराया उस स्टेशन के नाम के आगे थर्ड क्लास के खाने में लिखा हुआ मिल जावेगा। वहाँ देख लेवें।

अक्सर उस बोर्ड में उसी रेलवे के स्टेशनों का किराया लिखा होता है, जिस कम्पनी का वह टिकट घर है। जैसे ई० आई० आर० के टिकट घर पर आप को बी० बी० एण्ड सी० आई० आर० के स्टेशनों का किराया ढूँढने पर नहीं मिल सकेगा।

टिकट की खिड़की

जिस खिड़की के अन्दर खड़ा हो कर बाबू, मुसाफिरों को टिकट बेचता है वह टिकट मिलने की खिड़की है। अक्सर खिड़की के सामने एक आड़ लकड़ी या लोहे की होती है। इसलिये कि एक यात्री पर पीछे से दूसरा यात्री न टूट पड़े और दायें बाएँ से ही आने जाने पावे।

टिकट की खिड़की के एक ओर अन्दर (In) और एक ओर बाहिर (Out) लिखा होता है। इसका अर्थ यह है कि "अन्दर" लिखा है उस ओर से टिकट लेने को घुसो और "बाहिर" की ओर से टिकट लेकर निकल जाओ।

कहीं-कहीं जहाँ पर भीड़ ज्यादः होती है, वहाँ एक तरफ पुलिस का एक सिपाही खड़ा रहता है। वह लोगों के साथ घूसा-मुक्की और गाली गलौज का व्यवहार करता है। लोग भी बाज नहीं आते। थर्ड क्लास के यात्रियों को अपनी इज्जत का ध्यान रखकर सभ्यतापूर्वक भले आदमियों की तरह बिना घबराये टिकट लेना चाहिये। ये पुलिस के सिपाही अक्सर उन लोगों को बीच में से भी घुस जाने देते हैं, या खुद टिकट खरीद देते हैं, जो उनकी मुट्ठी में चार छः पैसे दे देते हैं। यह बहुत ही बुरा है। मुसाफिरों को चाहिये कि रेलवे के किसी भी कर्मचारी को किसी प्रकार की रिश्वत न देवें। हाँ, यदि खिड़की देर से खुलने के

कारण टिकट बँटते वक्त, भीड़ होती है तो इसकी इत्तला स्टेशन-मास्टर अथवा डी० टी० एस०* को दे देनी चाहिये।

टिकट लेते समय दूसरे यात्रियों को धक्का देना या दबाना अथवा तंग करना ठीक नहीं। चुपचाप शांतिपूर्वक टिकट खरीदना चाहिये। टिकट खरीदते वक्त धूम-धक्कड़ में अक्सर गिरहकट लोग जेब वगैरः काट लेते हैं, इसलिये बहुत सावधान रहना चाहिये।

टिकट के जितने पैसे हों अपने पास रखने चाहिये। इस भरोसे पर खिड़की के पास नहीं पहुंच जाना चाहिये कि बाकी पैसे बाबूसाहब लौटा देंगे। मान लीजिये कि आपके टिकट का मूल्य सात आने हैं और आपने एक रुपया इस गर्ज से दिया कि एक टिकट और बाकी नौ आने बाबू से मिल जावेंगे। बाबू ने कह दिया "पैसे नहीं हैं" तो फिर आपको वहाँ से अपना सा मुँह लिये हटना पड़ेगा।

खिड़की में टिकट लेनेवाले यदि एक मुसाफिर का हाथ हो तो अपना दूसरा हाथ नहीं घुसेड़ना चाहिये। जब वह टिकट लेकर हाथ बाहर करले, तब अपना हाथ अन्दर डालो।

बड़े-बड़े स्टेशनों पर थर्ड क्लास के टिकट घर की

---

*हरएक रेलवे में कई डिस्ट्रिक्ट होते हैं और प्रत्येक डिस्ट्रिक्ट का डी० टी० एस० अलग-अलग जगह होता है। पूछने पर पता लगाया जा सकता है। —लेखक

तरह फर्स्ट और सेकेण्ड क्लास के टिकट घर (बुकिंग आफिस) होते हैं। इसलिये ध्यानपूर्वक देख लो कि वह बुकिंग आफिस, जिससे आप टिकट लेना चाहते हैं, थर्ड क्लास का है या नहीं।

जहाँ कई कम्पनियों की गाड़ियाँ आकर किसी बड़े स्टेशन पर ठहरती हैं वहाँ प्रत्येक कम्पनी की ओर से अलग-अलग टिकट घर बने होते हैं। इसलिये जिस रेल द्वारा आपको सफर करना हो, उसी टिकट घर की खिड़की से टिकट माँगना चाहिये। जो बुकिंग आफिस जिस कम्पनी का होता है उसका बोर्ड उस खिड़की पर लगा रहता है। देखकर टिकट खरीदना चाहिये।

टिकट

यह एक लगभग दो अंगुल चौड़ा और ३ अंगुल लम्बा, मोटे कागज का होता है। सभी कंपनियों के टिकटों की साइज़ एक ही होती है। रंग में फर्क होता है। टिकट पर अँगरेजी और भारतीय लिपियों में रवाने होने के स्टेशन का नाम और जहाँ पहुँचना है उस जगह का नाम, मूल्य, नम्बर और किसी-किसी कम्पनियों के टिकटों पर मील भी लिखे होते हैं। टिकट की पीठ पर रेलवे कम्पनी का नाम और तारीख, उस दिन की जिस दिन टिकट खरीदा गया हो, छपी रहती है। टिकट खरीद कर खिड़की के सामने से

तब हटो, जब कि आप अपने पहुँचने के स्टेशन का नाम, कीमत और अपने पैसे अच्छी तरह सँभाल लो। परन्तु यह काम अत्यन्त फुर्ती से दो-तीन सेकेण्ड में ही कर लेना चाहिये। वहाँ एकाध मिनट खड़े रहने का मौका नहीं होता।

अगर टिकट में या किराये में कुछ भूल हो तो तत्काल ही बाबू (बुकिंगक्लर्क) से ठीक करा लेनी चाहिये। टिकट खरीदने में बाबू को किसी तरह की घूस रिश्वत कदापि नहीं देनी चाहिये। वह इसी काम की तनख़्वाह पाता है, उसे पैसे देना पाप है। यदि भूल से तुम्हारे पास कोई दूसरा टिकट आ जावे, या पैसे ज्यादः आ जावें तो ईमानदारी इसी में है कि आप उसे तत्काल लौटा देवें। यदि आप नहीं लौटावेंगे तो उतने पैसे कम्पनी उसकी तनखाह में से काट लेगी।

कभी-कभी क्या होता है कि मुसाफिर लम्बा टिकट चाहता है, परन्तु बाबू आलमारी में छपा हुआ टिकट न होने के कारण देने से इन्कार कर देता है। परन्तु नहीं, आप उसे टिकट बनाकर देने के लिये कह सकते हैं। उसकी आलमारी में ऐसे कोरे टिकट भी रहते हैं जिन पर वह स्टेशनों के नाम और किराया अपने हाथ से लिखकर तुम्हें दे सकता है। इस काम में बाबू को तकलीफ होती है; क्योंकि उसे किताबें देख कर किराया मालूम करना पड़ता है,

और इतने पर भी यदि कुछ कम पैसे लिये गये तो बाबू की तनख्वाह में से काट लिये जाते हैं। इसीलिये अक्सर बाबू लोग टिकट बनाकर देने में आनाकानी किया करते हैं। यदि बाबू को फुर्सत हो तो आप उससे अवश्य नया टिकट बनवा सकते हैं, उसका फर्ज़ है। इस टिकट की बनवाई में अक्सर बाबू लोग मुसाफिरों से कुछ न कुछ ऐंठ ही लिया करते हैं। मुसाफिरों को चाहिये कि जो कीमत टिकट की है उससे ज्यादः एक फूटी कौडी भी न देवें।

जहाँ पुट्ठे (गत्ते) के टिकट नहीं होते वहाँ "पेपर टिकट" पर नया टिकट तय्यार किया जाता है। यह मामूली कागज का टुकड़ा होता है। यही टिकट होता है। उसे देखकर चौंकना नहीं चाहिये। जब टिकट स्टाक में नहीं रहते तब "पेपर टिकट" को ही काम में लाया जाता है।

मामूली टिकट के सिवा टिकट और भी कई तरह के होते हैं। साधारण रिटर्न टिकट, वीक-एण्ड रिटर्न टिकट, कन्सेशन टिकट, सीज़न टिकट इत्यादि। इन टिकटों की मियाद दी जाती है, उतने ही दिनों में यात्रा पूरी करनी पड़ती है, नहीं तो किराया देना पड़ता है। थर्ड क्लास के पैसेञ्जरों को ऐसे टिकटों से बहुत कम काम पड़ता है, इसलिये इन टिकटों के विषय में यहाँ कुछ नहीं लिखा जाता। वीक-एण्ड के विषय में आगे दिया गया है।

एक बात ध्यान में रखनी चाहिये कि टिकट लेने के बाद उसके नम्बर जो उसके दोनों कोनों पर अँगरेजी में छपे होते हैं, किसी कागज पर लिख लेना चाहिये। यदि इत्तफाक से टिकट खो भी जावे तो इन नम्बरों को बतलाने से छुटकारा हो सकता है।

आपने यदि टिकट खरीद लिया है और किसी जरूरी कार्य के आ जाने से आप उस गाड़ी से न जाने पावें तो आप दूसरी गाड़ी से जा सकते हैं। बशर्ते कि तारीख न बदलने पावे। अँगरेजी तारीख रात के ठीक बारह बजे बदलती है। मान लो आपने रात के ११ बजे एक टिकट खरीदा और आप उस गाड़ी से नहीं जा सके तो १२ बजते ही वह टिकट रद्दी हो जावेगा। हाँ यदि यही टिकट आपने शहर के टिकटघर से खरीदा हो तो दूसरे दिन के १२ बजे रात तक उसी टिकट से यात्रा आरम्भ की जा सकती है। तारीख बदलने के पूर्व यदि आप टिकट कलेक्टर को गाड़ी से न जा सकने के सप्रमाण काफी वजूहात बताकर उस टिकट की पीठ पर उसी टिकट से यात्रा करने की आज्ञा लिखा लेंगे तो भी दूसरी पहली ट्रेन से जा सकेंगे। यदि किसी कारणवश टिकट लेने के बाद यात्रा न करना हो तो गाड़ी छूटने के ३ घण्टे के अन्दर स्टेशन मास्टर से कहने पर उसे मूल्य वापस मिल सकता है। ३ घंटे के बाद ट्राफिक सुपरिण्टेण्डेण्ट को लिखने से हो सकता है।

साप्ताहिक वापसी (Week-end Return) टिकट

कुछ रेलवे कम्पनियों (जैसे ई. आई. आर., एन. डबल्यू. आर., बी. एन. आर., ई. बी. आर. आदि) ने साप्ताहिक वापसी वीक-एण्ड रिटर्न टिकट जारी किये हैं जो कि मोटे हिसाब से नीचे लिखे हुए नियमों के अनुसार मिलते हैं। विशेष जानने के लिये स्टेशन-मास्टर से दरियाफ्त कीजिए।

१—१६ मील से ३० मील तक एक तरफ के किराये का ड्योढ़ा, ३१ मील से ४५ मील तक एक तरफ का किराया और उसका एक तिहाई, ४६ मील या इससे ऊपर एक तरफ का किराया और उसका चौथाई।

२—यह टिकट शुक्रवार (बृहस्पतिवार की आधी रात के बाद) से शनिवार की आधी रात तक मिलता है और मङ्गल की आधी रात के पहले उसी टिकट से अपने स्थान पर लौट आना चाहिए। निश्चित समय के बाद लौटने पर टिकट काम न आएगा।

३—इस टिकट से बीच रास्ते में यात्री ठहर नहीं सकता। बीच रास्ते में ठहर जाने पर एक तरफ का टिकट बेकाम हो जायगा।

४—शहर के बुकिंग आफिस से भी खरीदे हुए टिकट से उसी दिन रवाना हो जाना चाहिए।

प्लेटफार्म टिकट

जिस प्रकार रेलगाड़ियों में बैठकर यात्रा करने

के लिये टिकट मिलता है उसी तरह मुसाफिरखाने से गाड़ी के पास तक जाने का भी एक टिकट होता है। उसे प्लेटफार्म टिकट कहते हैं। इसकी क़ीमत सर्वत्र एक आना होती है। जो आदमी आपको रेल के पास तक पहुँचाना चाहें उनके लिये फी आदमी एक प्लेटफार्म टिकट ज़रूर खरीद लेनी चाहिये। यदि बिना टिकट रेल तक कोई चला गया तो गाड़ी जाने के बाद टिकट कलेक्टर मय जुर्माने के जंकशन स्टेशन तक या अन्तिम चेकिंग स्टेशन तक का महसूल वसूल कर लेगा।

बड़े-बड़े स्टेशनों पर प्लेटफार्म टिकट मशीनें देती हैं। उस मशीन में आप एक अन्नी डाल दीजिये, बस तत्काल ही उस तारीख का छपा हुआ एक टिकट बाहर निकल आवेगा। बम्बई, कलकत्ता जैसे बड़े-बड़े स्टेशनों पर यह मशीन रखी गई है।

स्टेशन मास्टर को यह अधिकार है कि वह, चाहे जितने मनुष्यों को बिना प्लेटफार्म टिकट के भी गाड़ी आने-जाने के वक्त प्लेटफार्म पर जाने की आज्ञा दे सकता है।

कन्सेशन टिकट

स्काउट्स या वे विद्यार्थी जो स्कूल या कालेज में पढ़ते हों, एक साथ यदि चार या चार से अधिक संख्या में रेल द्वारा सफर करना चाहें तो वे कन्सेशन

(रिआयती) टिकट प्राप्त कर सकते हैं। इसके लिये उन्हें स्कूल के हेड मास्टर या प्रिन्सिपल की चिट्ठी के साथ ट्राफिक सुपरिण्टेण्डेण्ट के पास एक पत्र लिखना पड़ेगा। ट्राफिक सुपरिण्टेण्डेण्ट की आज्ञा प्राप्त होने पर कन्सेशन टिकट मिल जावेगा।

टिकट कलक्टर

यह एक रेलवे कर्मचारी होता है, यह मुसाफिरों के आने-जाने के उस मार्ग (फाटक) पर खड़ा रहता है जिससे कि टिकट खरीदने के बाद यात्री रेल में बैठने के लिये प्लेट फार्म पर आता है। इसे आते-जाते समय अपना टिकट दिखाना पड़ता हैं। जहाँ यात्रा समाप्त होती है, वहाँ इसे अपना टिकट देकर अपने घर आना पड़ता है। यह बाबू टिकट की अच्छी तरह जाँच करता है। तारीख और जहाँ जाना है उस स्टेशन का नाम देखना इसे लाजिमी है। नकली, पुराना, फटा, जिसपर की तारीख नम्बर और नाम साफ न पढ़े न जा सकें, ऐसे टिकट वाला यात्री रोक लिया जाता है और उसे प्लेटफार्म पर जाने नहीं दिया जाता। यदि कोई ऐसा खराब टिकट लिये रेल से उतरे तो टिकट कलेक्टर उसे रोक कर जहाँ से टिकट चालू हुआ है, वहाँ से पूरा किराया और जुर्माना उससे वसूल करेगा।

यात्री को प्लेटफार्म पर जाने से पूर्व अपना

टिकट फाटक पर खड़े बाबू को दिखाकर आगे बढ़ना चाहिये। यात्री फाटक से गुजरा है, इस बात का प्रमाण, वह उस टिकट को एक कैंची (निपर) में दबा कर देता है। इस कैची में दबाने से टिकट पर कोई निशान हो जाता है। इसको टिकट कटाना कहते हैं। जिन छोटे-छोटे स्टेशनों पर टिकट कलक्टर नहीं होते वहाँ टिकट देने वाला बाबू ही टिकट को काट भी दिया करता है।

कभी-कभी फाटक पर टिकट कलक्टर के बजाय और कोई आदमी यहाँ तक कि पोर्टर तक भी खड़े हो जाते हैं। पुलिस के सिपाही भी टिकट काटने के लिये खड़े हो जाते हैं। यात्रियों को चाहिये कि ऐसे लोगों को अपना टिकट न दिखावें और न देवें। इस बेक़ायदा कार्रवाई का अच्छी तरह मुकाबिला करें। इन टिकट कलेक्टरों की टोपियों में या कोट में उन भागों पर जहाँ यात्रियों की निगाह सहज ही में पड़े, अँगरेजी में टिकट कलेक्टर, टिकट इग्ज़ामिनर, टिकट चेकर, टिकट इन्स्पेक्टर आदि आदि शब्द लगे रहते हैं। इनके अतिरिक्त स्टेशन मास्टर, गार्ड और स्टेशन से उच्च रेलवे कर्मचारी भी आवश्यकता आ पड़ने पर टिकट देख सकते हैं।

टिकट घर खुलना

टिकट घर अक्सर समय पर नहीं खुलते, इससे

मुसाफिरों को जो कष्ट होता है वह लिखा नहीं जा सकता। टिकटघर देरी से खुलने के कारण धक्कम-मुक्का हो जाता है, मार-पीट तक होती है, चोरियाँ हो जाती हैं, पुलिस को रिश्वत चेत जाती है और यात्री रह जाते हैं। यात्रियों को यह मालूम रखना चाहिये कि बड़े-बड़े स्टेशनों पर टिकटघर गाड़ी आने से दो घण्टे पूर्व और छोटे-छोटे स्टेशनों पर आध घंटे पहले टिकटघर खुल जाने का नियम है। प्रायः सभी रेलवे के बहुत बड़े-बड़े स्टेशनों पर के टिकट घर रात-दिन खुले रहते हैं।

लम्बा सफर करनेवाले यात्री दिन में किसी भी समय टिकट खरीद सकते और अपना लगेज (असबाब) बुक करा सकते हैं। यदि बुकिंगक्लर्क ऐसा करने से इन्कार करे तो तत्काल स्टेशन-मास्टर और ट्रैफिक सुपरिण्टेण्डेण्ट को इस मामले की रिपोर्ट कर देनी चाहिये।

रेलगाड़ी

टिकट लेकर प्लेटफार्म पर आ जाने के बाद यात्री रेल में बैठने का अधिकारी हो जाता है। इसलिये रेलगाड़ी के विषय में कुछ समझ लेना जरूरी है। अंगरेजी भाषा में रेल (Rail) लोहे की पटरी को कहते हैं। जिस लोहे की पटरी पर डब्बे और एंजिन अकेले अथवा बहुत से जुट कर चलते हैं उसे "रेल"

कहते हैं। उसपर चलनेवाली गाड़ी को अँगरेजी में रेलवे ट्रेन और हिन्दी में रेलगाड़ी, धुआँगाड़ी या आगगाड़ी कहते हैं। परन्तु आज़कल "रेल" शब्द से अर्थ रेलगाड़ी का ही लिया जाने लगा है। रेल का रास्ता चौड़ाई के लिहाज से ३ प्रकार का माना जाता है। इस बात को हम पीछे मय नाप के एक जगह बता आये हैं।

गाड़ियाँ पाँच तरह की होती है। (१) मेल--जिसे हिन्दी में डाक गाड़ी कहते हैं। यह सब गाड़ियों से तेज दौड़ती है, और बड़े-बड़े स्टेशनों पर ही ठहरती है। इसमें बैठनेवाले थर्डक्लासके और मझले दर्जेके मुसाफिरों को कुछ कंपनियों में ज्यादः किराया देना होता है। इसमें थर्ड क्लास और इंटर क्लास के मुसाफिरों के लिये दूरी का बन्धन भी रखा गया है। (२) एक्सप्रेस या फास्ट पैसेञ्जर--यह भी तेज दौड़ती है, परन्तु डाक की तरह नहीं। यह डाकगाड़ी की अपेक्षा अधिक स्टेशनों पर ठहरती है, परन्तु सब पर नहीं। कुछ रेलोंमें इसमें भी थर्ड क्लासका किराया अधिक या इंटर क्लास का देना पड़ता है। (३) पैसेंजर--यह डाकगाड़ी और एक्सप्रेस से धीमी चलती है तथा प्रत्येक स्टेशन पर ठहरती हुई जाती है। (४) मिक्स्ड--इसमें पैसेंजर तथा माल के डब्बे लगे होते हैं। माल के डब्बों के कारण इसे स्टेशनों पर अधिक ठहरना पड़ता है; क्योंकि जहाँ

तहाँ माल के डब्बे काटे और जोड़े जाते हैं तथा माल चढ़ाया-उतारा जाता है। इसकी चाल पैसेंजर से भी कम होती है और (५) गुड्स—इसे हिन्दी में मालगाड़ी कहते हैं। इसमें माल ही जाता है, मुसाफिरों के लिये यह गाड़ी नहीं है।

क्लास

अँगरेजी में जिसे क्लास कहते हैं, उसे ही हिन्दी में दर्जा कहते हैं। मुसाफिर ले जाने वाली गाड़ियों में चार प्रकारके दर्जे होते हैं—फर्स्ट, सेकेंड, इंटर और थर्ड।

सं०	अँगरेजी नाम	हिन्दी नाम	चिह्न जिससे पहचाने जाते हैं
१	फर्स्ट क्लास	पहला दर्जा	I CLASS या 1
२	सेकेंड क्लास	दूसरा दर्जा	II CLASS 2
३	इंटर क्लास	मझला दर्जा	INT CLASS INT
४	थर्ड क्लास	तीसरा दर्जा	III CLASS 3

थर्ड की अपेक्षा इण्टर में, इण्टर की अपेक्षा सेकेण्ड में और सेकेण्ड की अपेक्षा फर्स्ट क्लास में आराम अधिक मिलता है। किराया भी एक का दूसरे से अधिक होता है। कई ट्रेनों में इण्टर क्लास नहीं होता और कई में अपर और लोअर नामक दो ही किस्म के डब्बे होते हैं। थर्ड क्लास के यात्रियों को लोअर में बैठना चाहिये।

जब गाड़ी स्टेशन पर आकर ठहरे तो पहिले इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि जिस डब्बे में

यात्री कम हों उसी में बैठने का प्रयत्न किया जाय। थर्डक्लास के यात्रियों को डब्बे में घुसने से पहिले यह देखना चाहिये कि डब्बा थर्ड क्लास का ही है या कोई दूसरा।

रेलगाड़ी में कुछ डब्बे ऐसे भी होते हैं, जिनमें थर्ड क्लास होने पर भी थर्ड क्लास के यात्री नहीं बैठ सकते हैं—'औरतों के लिये'। इस डब्बे में थर्ड क्लास में बैठकर यात्रा करनेवाली स्त्रियाँ और आधे टिकट के लड़के ही बैठ सकते हैं। मर्दों को इस डब्बे में खाली होने पर भी नहीं बैठना चाहिये। इसी प्रकार एक कम्पार्टमेण्ट "यूरोपिअन और यूरेशियन" के बैठने के लिये सुरक्षित होता है। इसमें अँगरेज या अँगरेजी पोशाक में रहनेवाले यात्री ही बैठ सकते हैं। एक कम्पार्टमेण्ट "सोडा और बर्फ" वाले का सुरक्षित होता है। उस पर लिखा होता है "आइस कम्पार्टमेण्ट"। इसी तरह एक छोटा सा कम्पार्टमेण्ट पानी पिलानेवाले आदमी का होता है। इन कम्पार्टमेण्टों में थर्ड क्लास के यात्रियों को नहीं घुसना चाहिये।

यदि बर्फ के लिये, पानी के लिये अथवा किसी दूसरे कार्य के लिये डब्बा रिजर्व्ड (Reserved) हो चुका हो और उस पर रिजर्व्ड (Reserved) लिखा हो या लिख कर कागज़ लगा दिया हो तो थर्ड क्लास के मुसाफिरों को उसमें नहीं बैठना चाहिये।

परन्तु यदि आप डब्बे में बैठ चुके हों और कोई सरकारी कर्मचारी उसे रिजर्व करने के लिये आपसे खाली कराता हो तो आप हरगिज़ खाली न करें। अक्सर देखा गया है कि डब्बे में पहले से बैठे हुए मुसाफिरों को हटाकर पुलिस के सिपाही, या कोई दूसरे कर्मचारी डब्बा खाली करा लेते हैं। कभी-कभी बड़े-बड़े स्टेशनों पर स्टेशन-मास्टर आदि भी बर्फ-वाले आदि के लिये रिजर्व करने को डब्बा खाली करा लेते हैं। बेचारे यात्री कानून नहीं जानने के कारण आधी रात में भी अपना सामान लेकर दूसरे डब्बों में चले जाते हैं। किन्तु पुलिस अथवा रेलवे के किसी भी अधिकारी को इस प्रकार पहले से बैठे हुए यात्रियों को डब्बे से निकाल कर बाहर कर देने का अधिकार नहीं है। मुसाफिरों को उचित है कि ऐसी गैर-कानूनी आज्ञाएँ कदापि न मानें। डब्बा यदि रिजर्व ही करना है तो वह नियमानुसार आरंभ के स्टेशन से ही रिजर्व होना चाहिये। यदि बीच में कहीं रिजर्व करना हो तो खाली देख कर करना चाहिये। किसी भी हालत में पहले से बैठे हुए मुसाफिर को नहीं हटाया जा सकता।

गाड़ी में एक डब्बा ब्रेक का और अन्त में एक डब्बा गार्ड का होता है, जिन पर ब्रेक (Brakevan) और गार्ड (Guard) लिखा होता है। उनमें भी यात्रियों को बैठने का अधिकार नहीं है। ब्रेक,

मुसाफिरों के सामान को, जो गार्डके सिपुर्द कर दिया जाता है, रखने के लिये सुरक्षित होता है। इसी प्रकार कुत्ता वगैरः पालतू प्राणी भी बन्द करने के लिये एक पिंजरा होता है।

गार्ड

उस रेलवे कर्मचारी को कहते हैं, जो रेलगाड़ी के आखिरी डब्बे में रहता है। वह, गाड़ी, मुसाफिर और उनकी जानोमाल की रक्षा के लिये नियुक्त होता है। गाड़ी की पूरी जिम्मेदारी उस गाड़ी के साथ चलने वाले गार्ड के ऊपर रहती है। यात्रियों को चलती ट्रेन में या ट्रेन सम्बन्धी जो कुछ भी शिकायत हो गार्ड से करनी चाहिये।

टाइम

सभी रेलवे में स्टैण्डर्ड टाइम रखा जाता है। जो कलकत्ता लोकल टाइम से २४ मिनट पीछे तथा बम्बई से ३६, मद्रास से ६, इलाहाबाद से २ और दिल्ली से २२ मिनट आगे रहता है। प्रायः सभी जगह लोकल टाइम और रेलवे टाइम में थोड़ा बहुत फर्क रहता ही है, इसलिये मुसाफिरों को चाहिये कि यात्रा करते समय अपनी घड़ियाँ स्टेशन की घड़ी से मिलाकर ठीक करलें। स्टेशनों पर घड़ियाँ स्टेशन-मास्टर के रूम में या तार घर में दीवार पर लगी रहती हैं।

फुटकर सूचनाएँ

१—यात्री को गाड़ी छूटने से पहले कम-से-कम २० मिनिट पूर्व स्टेशन पर पहुँच जाना चाहिये। बड़े-बड़े स्टेशनों को छोड़ कर प्रायः सभी स्टेशनों पर गाड़ी आने पर टिकट देना बन्द कर दिया जाता है।

२—मुसाफिरों को टिकट और लगेज की बिल्टी का नम्बर जरूर नोट कर लेना चाहिये। मौके पर बड़े ही काम आते हैं। इसी तरह जिस डब्बे में बैठे हों उसका नम्बर भी लिख लेना चाहिये। डब्बे का नम्बर डब्बे के बाहर दोनों ओर और डब्बे के अन्दर भी लिखा होता है।

३—गाड़ी के डब्बे में फर्श पर या सीट पर थूकना, कुल्ला करना, नाक साफ करना, पानी डालना, फलों के छिलके डालना बहुत बुरा है। डब्बे को गन्दा नहीं करना चाहिये।

४—डब्बे में यदि कोढ़ी, क्षयी, प्लेग से पीड़ित, हैजे का रोगी, गर्मी (आतशक) वाला कोई यात्री हो तो उससे दूर बैठना चाहिये। ये रोग छूत के द्वारा पैदा हो जाया करते हैं।

५—अगर कोई रेलवे कर्मचारी आपसे कुछ पैसे माँगे तो बिना रसीद प्राप्त किये नहीं देना चाहिये। बिना रसीद के किसी रेल के कर्मचारी को कोई रकम लेने का अधिकार नहीं है। भूल से ली गई,

अधिक रकम, रसीद के आधार पर लिखा-पढ़ी करने से वापस मिल सकती है।

६—गाड़ी में अपने डब्बे के किसी अपरिचित मुसाफिर से झट-पट नहीं मिलजुल जाना चाहिये। अपने दिल की बातें कहना अथवा अपनी कीमती वस्तुओं को उन्हें दिखाना भी ठीक नहीं है। किसी यात्री की दी हुई चीज़ कदापि नहीं खानी-पीनी चाहिये। इससे कभी-कभी बड़ा ही अनर्थ होते देखा गया है।

७—गाड़ी के चलने पर खिड़कीके बाहर झुकना, दर्वाजा खुला रखना अथवा बाहर पटरी पर खड़ा होना बड़ा ही खतरनाक है। चलती ट्रेनमें एक डब्बे से दूसरे डब्बे तक जानेवाले पर मुकदमा भी चलाया जा सकता है।

८—स्टेशन पर जब गाड़ी आवे तो, उससे दूर हटकर खड़े रहना चाहिये, ऐसा न हो कि गाड़ी की फटकार से या गाड़ी के गुजरने से चक्कर खाकर आप गिर पड़ें और रेल के नीचे कुचल जावें। स्टेशन पर जब गाड़ी बिलकुल ठहर जावे तभी डब्बे में चढ़ना या उतरना ठीक है। चलती हुई गाड़ी में चढ़ने की कोशिश करना अपनी जान को खतरे में डालना है।

९—किसी भी रेलवे के कर्मचारी के बेकायदा और बेहूदे व्यवहार की रिपोर्ट उस रेलवेके डिस्ट्रिक्ट ट्रैफिक सुपरिण्टेण्डेण्ट या ट्रैफिक मैनेजरसे करनी चाहिये।

१०—स्टेशन पर खाने-पीने का सामान खरीदना हो तो लाइसेन्स प्राप्त बेचनेवालों से ही लेना चाहिये। यदि उसका सामान खराब हो तो फौरन स्टेशन मास्टर से उसकी शिकायत करनी चाहिये।

११—स्टेशन पर बिकनेवाली वस्तुओं की कीमत रेलवे अधिकारियों द्वारा निश्चित कर दी जाती है और उस भाव की सूची प्रत्येक बेचनेवाले को दी जाती है। यदि कभी किसी मुसाफिर को किसी वस्तु का मूल्य ज्यादः लिये जाने का शक हो अथवा खाने की वस्तु घटिया, खराब, बदजायका और बदबूदार हो तो इसकी सूचना फौरन स्टेशनमास्टर को दे देनी चाहिये।

१२—प्रत्येक स्टेशन पर एक हिन्दू पानी पिलाने-वाला और एक मुसलमान भिश्ती यात्रियों को पानी पिलाने के लिये नौकर रहता और मार्च महीने से लगाकर अक्टूबर तक सब मुसाफिर गाड़ियोंमें पानी का स्थायी इन्तज़ाम रहता है। गाड़ी में या स्टेशन पर कहीं भी पानी की कीमत नहीं ली जाती। इस लिये यदि कोई पानीवाला कभी कुछ पैसे माँगे, तो स्टेशन-मास्टर को इसकी इत्तला कर देनी चाहिये।

१३—मुसाफिर को एक ही जगह का टिकट मिल सकता है, चाहे वह एक खरीदे या अनेक। परन्तु एक ही यात्रीको कई स्टेशनोंका टिकट नहीं मिल सकता।